RNI क्र. 50309/85/पृष्ठ संख्या 44/प्रकाशन तिथि 1 जनवरी 2026

अंक 472 ● जनवरी 2026

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका

मूल्य ₹ 50

अलविदा, विनोद जी!

विनोद कुमार शुक्ल (1 जनवरी 1937 - 23 दिसम्बर 2025)

अगर दुनिया दो दुनियाओं का जोड़ है, तो वो एक घर की दुनिया और एक घर के बाहर की दुनिया होगी। घर में बाहर भले ही चला आए पर घर का बाहर आना कम ही होता है। हम बाहरवालों से बाहरवाला बनकर मिलते हैं। अपना घरवाला हिस्सा छोड़कर मिलते हैं। इसलिए थोड़ा कम मिलते हैं। घर में वक्त लचीला होता है। कसा हुआ नहीं होता। उस लचीले से लय मिलाते हम घर आते ही ढीले-ढाले, नरम कपड़े पहन लेते हैं।

पर विनोद जी जिससे भी मिलते अपने घर के साथ मिलते। उनके पहले सवाल घर के सवाल होते। मसलन खाना खा लिया, ठीक हो, घर पर सब कैसे हैं। पूछते-पूछते वो आपके घर को भी वहीं ले आते थे। घर आते ही घर का लचीला वक्त और नर्माई भी आ जाती। और आप सहज ही बातों के रस्ते उन किरदारों से मिल लेते थे जिनसे आप उनकी कहानियों में मिले थे। बोलू, कूना, यासी, रासा, भोला...। जैसे इन नामों को बोलने के लिए आपकी ज़ुबान को वर्जिश नहीं करनी पड़ती, वैसे ही इनसे मिलने आपको कोई नकली जामा नहीं पहनना पड़ता। आप साधारण होकर ही उन किरदारों के रोज़मर्रा की साधारणता देख सकते हैं।

विनोद जी के लिखे में पास की इतनी चीज़ें होती थीं कि नज़र किताबवाली चिड़िया से उठे तो पास बैठी चिड़िया पर ही ठहरे। और आप सोचने लगें कि ये किताब से निकली चिड़िया है या किताबवाली चिड़िया से मिलने आई चिड़िया। पास की नदी, पहाड़, पेड़, महुआ, लोग, साइकिल, रिक्शा, हाट-बाज़ार, हलवाई, बच्चे, स्कूल, कबूतर होते। दूर की नदी, पहाड़, सड़कें होतीं। उन्हें देखते, उन पर खेलते-चलते पास के लोग, बच्चे, आदिवासी होते। दूर के ग्रह होते। पर वहाँ से देखना घर का होता तो वो दूरी दूरी नहीं लगती थी। पर यह विनोद जी का ही कमाल था कि इन बहुत पास की चीज़ों से वो बात बहुत दूर की करते थे। उनकी भाषा में कोई पेंच नहीं होता। पर बात पेंचदार होती।

उनकी कहानियों-कविताओं में आई हर चीज़ अपने संसार के साथ आती थी। कुछ इस तरह कि होती तो वहाँ बस एक चिड़िया थी, पर पढ़नेवालों को वो उसके घोंसले, उसके रात-दिन, उसकी हवाओं, चहक, चुग्गे, चूज़े, साथी, पेड़, सूरज के साथ दिखती। इसीलिए उनकी कहानियाँ खत्म नहीं होती थीं। पन्नों से फिसलकर जीवन में पसरी दिखती थीं। *चकमक* की किस्मत थी उसके हिस्से विनोद जी के लिखे दो उपन्यास आए। *हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी और बौना पहाड़* और *यासी, रासा और त*ा बोलू आया जो पतरंगी की तरह है – बोलता है तो चलता है, चुप होता है तो रुक जाता है। स्कूल में जब वो बोलता है तो मास्टरजी औऱ पूरी क्लास उसके पीछे चलती है। कुछ इस तरह से कि कई तरह के बोलने के तरीकों में से यह भी एक तरीका है। जो अलग है। पर असाधारण नहीं।

विनोद जी ने बोलने व लिखने में शब्दों की हमेशा किफायत बरती। पर इससे उनकी भाषा, कथन, विषय, संवेदनाओं, एक्सप्रेशन्स, तिलिस्म में कोई सिमट नहीं दिखी। बल्कि वो निखरा ही। जिसने भी जिस भी उम्र में उन्हें पढ़ा इस उम्मीद से लौटा कि लिखने की कोशिश की तो जा सकती है। इस कोशिश ने कई पाठकों की उँगली थाम उन्हें लेखक बनाने की दहलीज़ तक पहुँचाया है। पहुँचाती रहेगी।

आपके लिखे में हम आपसे मिलते रहेंगे विनोद जी।

अंक 472 जनवरी 2026

चकमक

इस बार

अलविदा! विनोद जी 2

कविता डायरी - हताशा से एक... - विनोद कुमार शुक्ल 4

हताशा से एक... : टिप्पणी - नरेश सक्सेना 5

बोहाग बिहू - पंकज सैकिया 6

बर्फ के स्तूप - पीयूष सेकसरिया 10

किताबें कुछ कहती हैं... 14

मैं क्या खाऊँ? - उमा सुधीर 15

अन्तर ढूँढो 17

क्यों-क्यों 18

भूलभुलैया 21

खिड़की - लवलीन मिश्रा 22

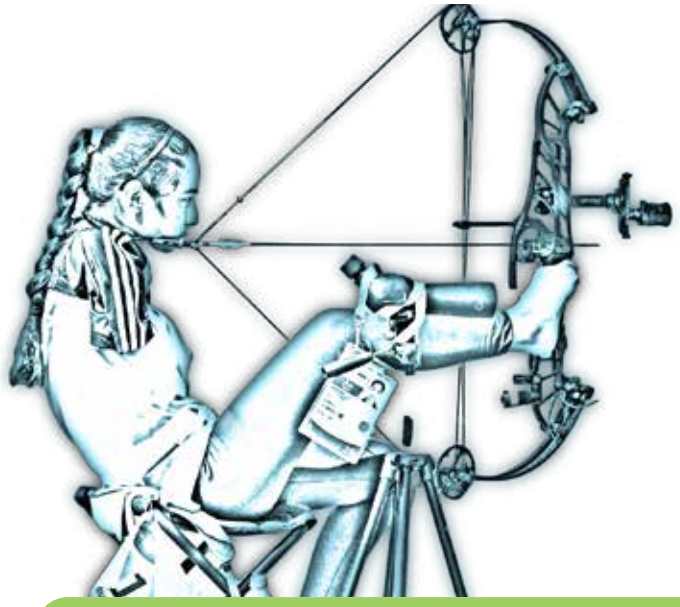

चित्रपहेली 28

यह तीर कहाँ से चला? - जितेश शेल्के 30

माथापच्ची 32

मेरा पन्ना 34

मेहमान जो कभी गए ही नहीं - भाग 17 - आर एस रेश्मी राज, ए पी माधवन व साथी 40

तुम भी जानो 43

क्यों महुआ तोड़े नहीं जाते... - जसिंता केरकेट्टा 44

आवरण चित्र: प्रशान्त सोनी

सम्पादक
विनता विश्वनाथन
कनक शशि अनिल

सह सम्पादक
कविता तिवारी

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी
उमा सुधीर

डिज़ाइन
कनक शशि अनिल

सलाहकार
सी एन सुब्रह्मण्यम्
शशि सबलोक

वितरण
झनक राम साहू

एक प्रति : ₹50

सदस्यता शुल्क
(रजिस्टर्ड डाक सहित)
वार्षिक : ₹ 800
दो साल : ₹ 1450
तीन साल : ₹ 2250

एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण:
बैंक का नाम व पता: स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर: 10107770248
IFSC कोड: SBIN0003867
कृपया खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

फोन: +91 755 2977770 से 2 तक; ईमेल: chakmak@eklavya.in,
वेबसाइट: https://www.eklavya.in/magazine-activity/chakmak-magazine

हताशा से एक व्यक्ति बैठ गया था

विनोद कुमार शुक्ल

हताशा से एक व्यक्ति बैठ गया था
व्यक्ति को मैं नहीं जानता था
हताशा को जानता था
इसलिए मैं व्यक्ति के पास गया
मैंने हाथ बढ़ाया
मेरा हाथ पकड़कर वह खड़ा हुआ
मुझे वह नहीं जानता था
मेरे हाथ बढ़ाने को जानता था
हम दोनों साथ चले
दोनों एक-दूसरे को नहीं जानते थे
साथ चलने को जानते थे।

टिप्पणी

नरेश सक्सेना

विनोद कुमार शुक्ल अपनी मौलिकता के साथ ही भाषा की अनगढ़ता के लिए विख्यात हैं। किन्तु इस कविता में मौलिक होने के साथ ही वे काव्य शिल्प के सिद्ध कवि की तरह भी दिखाई देते हैं।

कविता के अर्थ इतने सहज और साफ हैं कि उन्हें व्याख्या की दरकार नहीं है। सरल शब्दों वाले वाक्य स्वयं ही अपना मर्म कह देते हैं।

"व्यक्ति को मैं नहीं जानता था, हताशा को जानता था" कहते ही वे 'जानने' की हमारी उस जानी-पहचानी रूढ़ि को तोड़ देते हैं जो जानने को व्यक्ति के नाम, पते, उम्र, ओहदे या जाति से जोड़ती है। यदि हम किसी व्यक्ति को उसकी हताशा, निराशा, असहायता या उसके संकट से नहीं जानते तो हम कुछ नहीं जानते। सड़क पर घायल पड़े अपरिचित व्यक्ति को देखकर क्या हम कह सकते हैं कि उसे हम नहीं जानते? वास्तव में हम जानते हैं कि वह व्यक्ति मुसीबत में है और उसे हमारी मदद की ज़रूरत है। यह कविता मनुष्य को मनुष्य की तरह 'जानने' की याद दिलाती है।

कविता लगातार 'नहीं जानने' और 'जानने' को बयान करती जाती है। शिल्प की इस बारीक कारीगरी को देखें –

"वह मुझे नहीं जानता था, हाथ बढ़ाने को जानता था" "हम एक-दूसरे को नहीं जानते थे, साथ-साथ चलना जानते थे" यह 'नहीं जानना' और 'जानना' कविता में किसी लोकगीत के स्थायी की तरह बार-बार लौटता है। गद्य में लिखी हुई किसी कविता में लिरिकल या गीतात्मकता का बोध इस खूबी के साथ हिन्दी की किस कविता में आया है, याद नहीं आ रहा।

जैसे किसी गज़ल में आखिरी शेर के आखिरी शब्द श्रोताओं की ज़ुबान पर आप से आप आ जाते हैं, वैसे ही इस कविता के अन्तिम शब्द – यानी 'साथ-साथ चलना' के बाद यदि कविता पाठ रोक दिया जाए तो सुनने वाले खुद वाक्य पूरा कर देंगे और कहेंगे 'जानते थे'।

यह कविता जानना शब्द के रुढ़िग्रस्त अर्थ को पूरी तरह से बदल देती है। इस कविता की पहली दो पंक्तियों में ही कवि अपनी पूरी बात कह देता है। शेष पंक्तियाँ उसी कहे गए को और सघन, और गहरा करती हैं। कविता का सन्देश है कि दो मनुष्यों के बीच मनुष्यता का एहसास यानी मानवीय संवेदना होना ज़रूरी है, जानकारियाँ ज़रूरी नहीं हैं।

किन्तु यह सन्देश कविता में उपदेश की तरह नहीं आता।

चित्र: कनक शशि अनिल

बोहाग बिहु

पंकज सैकिया

क्यों इतना चिल्ला रही हो? आजकल कोई नहीं आता बिहू नाचने।

आएँगे, ज़रूर आएँगे। बस मेरे बालों के लिए एक कोपौ फूल मिल जाता तो...

अरे वाह! नाम लेते ही दिख गया।

दादा प्लीज़, मुझे वो फूल लाकर दो ना।

कितनी ऊँचाई पर है वो।

अपनी बहन के लिए इतना नहीं कर सकते क्या?

ओए, यहाँ फूल तोड़ना मना है।

ठीक है।
क्या मुसीबत है?

मेरे दादाजी ने फूल तोड़ने से मना किया है।

ठीक है। अपने दादाजी के सर पर फूल लगा दो तुम।

चलो भोंटी।

मैंने कहा था ना कोई नहीं आने वाला बिहू नाचने।

ये रखो।

पर तुम्हारे दादाजी...?

एक फूल गायब होने से दादाजी को कुछ पता नहीं चलेगा।

वाह! तुम कितने अच्छे हो। थैंक यू।

अरे वाह! हमारी हुसोरी भी आ गई।

चलो हमारे साथ बिहू नाचने।
बिहू नहीं आता मुझे।
कोई नहीं। जब ढोल बजेगा तब कमर अपने आप ही लचकेगी।

बर्फ के स्तूप

पीयूष सेकसरिया
अनुवाद: विनता विश्वनाथन

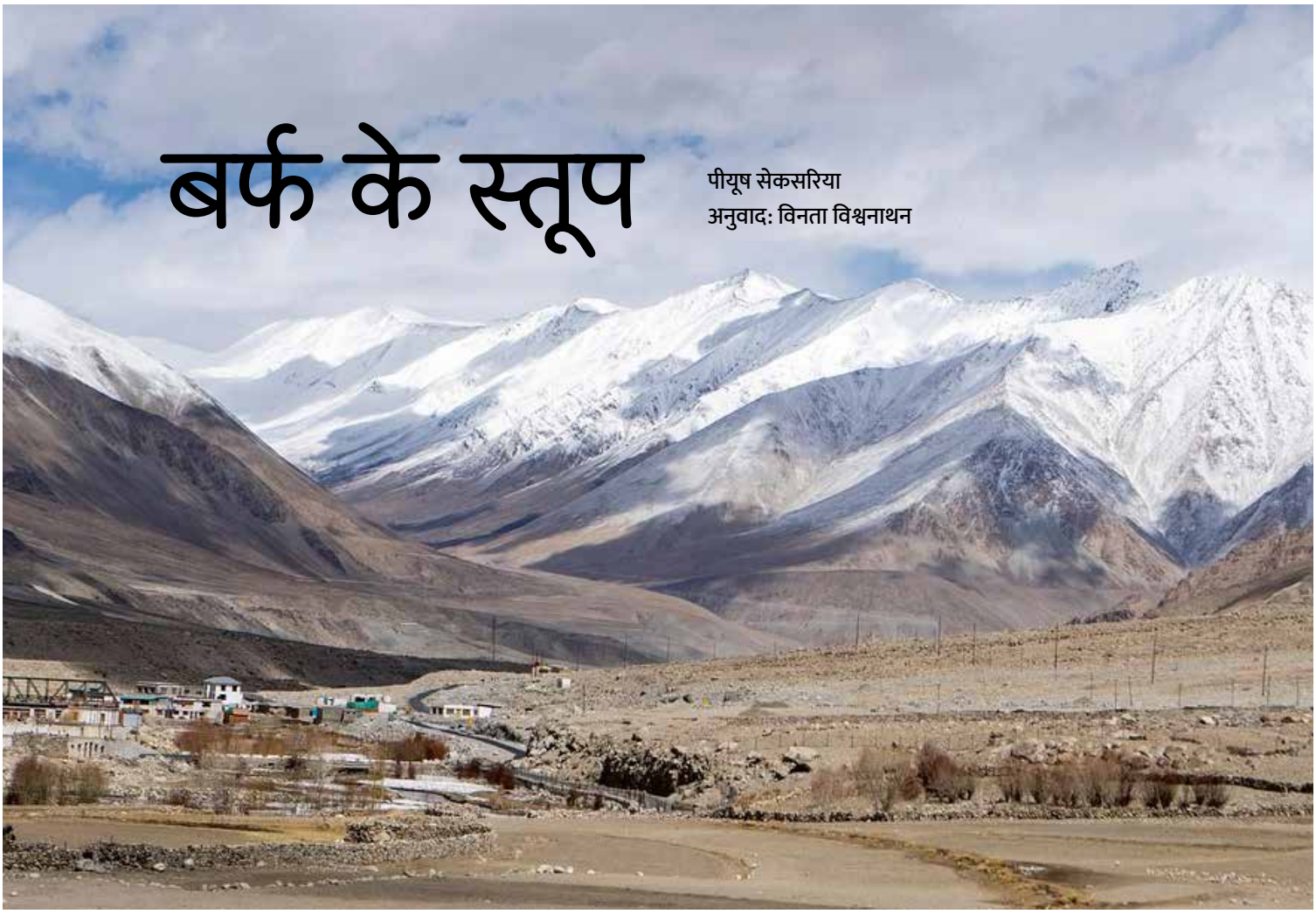

लद्दाख हिमालय के वर्षा छाया क्षेत्र में पड़ता है। बहुत ही कम बारिश और बर्फबारी के चलते इसे ठण्डा रेगिस्तान कहा जाता है। लद्दाख में कई छोटी हिमनदियाँ हैं, लगभग हर गाँव के ऊपर। इन हिमनदियों के पिघलने से मिलने वाला पानी ही खेतीबाड़ी और लोगों की ज़रूरतों का एकमात्र स्रोत है। हालाँकि बढ़ते तापमान के साथ बर्फ की चादर सिकुड़ती जा रही है। हिमनदियाँ पीछे हट रही हैं। नतीजतन पानी की गम्भीर कमी हो गई है – इतनी ज़्यादा कि ज़मीन बंजर हो गई और कुछ गाँवों को फिर से बसाना पड़ा।

1980 के दशक में सिविल इंजीनियर चेवांग नॉरफेल ने देखा कि उनके बहते नलों के नीचे एक छायादार जगह पर पानी जम गया था। उन्होंने सोचा अगर वह बहते पानी को छायादार जगहों पर इकट्ठा कर सकें, तो वह जम जाएगा और कृत्रिम हिमनदी बन जाएगी। उन्होंने गाँवों के ऊपर अलग-अलग ऊँचाई पर ध्यान से चुनी गई छायादार जगहों पर पानी के तालाब बनाने का प्रयोग किया। इससे पानी की गति धीमी हो गई, जिससे कड़ाके की सर्दी में बर्फ जमने लगी। बसन्त ऋतु आते ही सबसे कम ऊँचाई पर बनी हिमनदी पिघल गई। इससे बुवाई के समय पानी मिला। जैसे-जैसे तापमान बढ़ा, ऊपर की ओर बनी हिमनदियाँ पिघलती गईं। इससे नीचे के खेतों में पानी की लगातार सप्लाई सुनिश्चित हुई। चेवांग नॉरफेल को लद्दाख के आइस मैन के नाम से जाना जाने लगा। उन्होंने ऐसी कई हिमनदियाँ बनाईं। उन्हें पद्म श्री से सम्मानित भी किया गया।

उनके काम से प्रेरित लोगों में से एक सोनम वांगचुक थे। क्योंकि पानी के तालाब बनाने के लिए छाया ढूँढना मुश्किल था, इसलिए वांगचुक ने सोचा

क्यों ना पानी को कोन के आकार में जमाएँ। इससे कम से कम सतह के सूरज के सम्पर्क में आने पर भी ज़्यादा मात्रा में बर्फ जम सकेगी। अक्टूबर 2013 में वांगचुक और स्टूडेंट्स एजुकेशनल एंड कल्चरल मूवमेंट ऑफ लद्दाख (SECMOL) ने लेह में 20 फीट ऊँचा बर्फ का स्तूप बनाया। इसके लिए उन्होंने डेढ़ लाख लीटर पानी जमाया। यह स्तूप ऐसी जगह बनाया गया जहाँ बिलकुल छाया नहीं थी। 2014 में मई का आधा महीना बीत जाने पर, 20°C तापमान पर भी यह स्तूप पूरी तरह से नहीं पिघला था।

बर्फ के स्तूप बसन्त ऋतु में होने वाले पानी के संकट से निपटने के लिए बनाए जाते हैं। यह समय बुवाई के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि लद्दाख में साल में केवल एक ही फसल चक्र होता है। इस मौसम में सिंचाई के लिए पानी की कमी होना या देर से पानी मिलना खाद्य सुरक्षा के लिए खतरे जैसा है। बर्फ के स्तूप बनाने के लिए पानी को ऊपरी क्षेत्रों से बिना किसी मशीन या बिजली के केवल गुरुत्वाकर्षण बल की मदद से पाइपों के ज़रिए नीचे लाया जाता है। शून्य से नीचे के तापमान वाली सर्द रातों में इस पानी को एक सहायक संरचना के ऊपर फव्वारे की तरह छिड़का जाता है। आम तौर पर यह संरचना स्थानीय विलो पेड़ की लकड़ी से बनी होती है। पानी की बूँदें हवा में ही जम जाती हैं और इस संरचना पर कोन के आकार में बर्फ जमा हो जाती है।

कोन का आकार सूरज की रोशनी के साथ सम्पर्क को कम करता है और सबसे अन्दर के भाग को इंसुलेट करता है। यानी उसे गर्म होने से बचाता है। इससे बर्फ के पिघलने की गति धीमी हो जाती है। बसन्त ऋतु में स्तूप ऊपर से नीचे तक धीरे-धीरे पिघलता है। इससे फसलों की सिंचाई के लिए पानी मिल जाता है।

हालाँकि बर्फ के स्तूप खास तौर पर बुवाई के मौसम की सिंचाई और घरेलू ज़रूरतों को पूरा

करने के लिए बनाए जाते हैं। लेकिन कुछ जगहों पर ये स्तूप गर्मियों के मौसम में भी पानी देते हैं। इससे गाँवों में भूजल फिर से भरता है और पानी की सप्लाई बढ़ती है। इस काम के लिए सोनम वांगचुक को 2016 में रोलेक्स अवॉर्ड मिला। दिलचस्प बात यह है कि इस पुरस्कार के विजेता समारोह में अपने साथ एक मेहमान को ला सकते

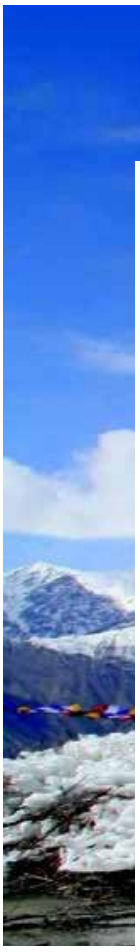

हैं, जो अमूमन कोई रिश्तेदार होता है। लेकिन सोनम अपने किसी रिश्तेदार की बजाय आबा चेवांग नोरफेल ले को ले गए ताकि सीमित संसाधनों और समर्थन के बावजूद कृत्रिम हिमनदियों के क्षेत्र में पिछले 30 सालों के उनके काम का सम्मान किया जा सके।

वांगचुक और उनकी टीम द्वारा विकसित शुरुआती बर्फ के स्तूपों को बनाने में कुछ दिक्कतें आईं। कई बार पाइपों के अन्दर पानी जम जाता था, जिससे इसका निर्माण रुक जाता था। इसे ठीक करने के लिए कड़ाके की ठण्ड में इन्सानों की मदद लेनी पड़ती थी। इससे निपटने के लिए वांगचुक ने ऑटोमेटेड सेंसर विकसित किए। ये सेंसर मौसम की निगरानी करते हैं, पानी के बहाव को दूर से नियंत्रित करते हैं और पाइपों में पानी जमने से रोकते हैं। इससे इन्सानी दखल कम होता है। इसी टेक्नोलॉजी के आधार पर 'एकर्स ऑफ आइस' के वैज्ञानिकों ने पिछली सर्दियों में सात ऑटोमेटेड बर्फ के स्तूप बनाए। इस साल वे 14 बर्फ के स्तूप बनाने की योजना बना रहे हैं। यह टेक्नोलॉजी अभी भी विकास के चरण में है और अभ्यास के साथ इसे बेहतर बनाया जा रहा है।

2019 से हर साल बर्फ के स्तूप बनाने की प्रतियोगिताएँ आयोजित की जा रही हैं। इनसे सफलता की कुछ शानदार कहानियाँ सामने आई हैं। ऐसी ही एक कहानी उरसी गाँव की है। ज़ांस्कर और सिंधु नदियों के बीच 3,700 मीटर की ऊँचाई पर स्थित दूरदराज के इस गाँव में केवल 16 घर हैं। ऐतिहासिक रूप से यहाँ कोई प्राकृतिक हिमनदी नहीं थी। इसलिए यह गाँव पूरी तरह से झरनों के पानी पर निर्भर था और इसे पानी की गम्भीर कमी का सामना करना पड़ता था। एक समय ऐसा भी आया जब खेती और रोज़ाना के इस्तेमाल के लिए पानी की लगातार कमी के कारण गाँववालों ने पूरी बस्ती छोड़ने का मन बना लिया था। यह स्थिति कृत्रिम हिमनदी बनाने से पहले की है, जिसे गाँववालों ने खुद बनाया था।

इस बीच बर्फ के स्तूप बनाने वालों के कौशल में और भी निखार आया है। 2024-25 की बर्फ के स्तूप बनाने की प्रतियोगिता में बने 25 स्तूपों में से तारचित का 150 फीट ऊँचा और 10 मिलियन लीटर वाला स्तूप जीता। तारचित को अपना अवॉर्ड चेवांग नोरफेल से मिला। बर्फ के स्तूप स्विट्ज़रलैंड और किर्गिस्तान में भी सफलतापूर्वक बनाए गए हैं।

हालाँकि इस साल कोई प्रतियोगिता नहीं है, फिर भी कम से कम 16 गाँव स्तूप बनाने का काम कर रहे हैं। इनमें से कुलुम का स्तूप सबसे ज़्यादा उत्साह जगा रहा

है। कुलुम लेह से 50 किलोमीटर दक्षिण-पूर्व में स्थित है। यह दो छोटे गाँवों, ऊपरी और निचले कुलुम में बँटा हुआ है। पहले इनमें क्रमश: सात और चार परिवार रहते थे। ऊपरी घाटी में हिमनदी के पीछे हटने की वजह से 2010 में ऊपरी कुलुम को पूरी तरह छोड़ दिया गया और परिवार पास के उपशी कस्बे में चले गए। गुज़ारा करने के लिए लोगों को अपनी पारम्परिक खेती छोड़कर दिहाड़ी मज़दूरी करनी पड़ी या छोटी-मोटी दुकानें चलानी पड़ीं। कुलुम गाँव के लोग अब हिमालयन इंस्टिट्यूट ऑफ अल्टरनेटिव्स (HIAL) के साथ मिलकर इस सर्दी में बर्फ के स्तूप बना रहे हैं। जब बसन्त आएगा, तो बर्फ के स्तूप के पिघलने से वे ड्रिप इरिगेशन (बूँदों से सिंचाई) तरीके का इस्तेमाल करके अपने खेतों की सिंचाई कर पाएँगे। अगर यह सफल होता है, तो परिवार वापस अपने गाँव लौट सकते हैं।

इसका एक और महत्वपूर्ण पहलू है। हिमनदी के पीछे हटने से घास के मैदान भी सूख जाते हैं, जिससे जंगली जानवर दूर चले जाते हैं। बर्फ के स्तूप के पिघलने से शायद ये घास के मैदान फिर से हरे-भरे हो जाएँ, और उम्मीद है कि जंगली जानवर भी लौट आएँ।

ध्यान से किए गए अवलोकन, पारम्परिक ज्ञान और अत्याधुनिक विज्ञान को मिलाकर ये अन्वेषक दुनिया भर में हिमनदियों पर निर्भर समुदायों के भविष्य को सुरक्षित कर रहे हैं।

रिगज़ेन मिंग्योर, पूर्व आइस स्तूपा परियोजना सह-नेता और Acres of Ice से प्राप्त जानकारियों सहित।

किताबें कुछ कहती हैं...

हैरी पॉटर

लेखक: जे के रोलिंग
प्रकाशक: स्कॉलास्टिक

दक्षा अग्रवाल, नौवीं 'बी', दिल्ली पब्लिक स्कूल, राँची, झारखण्ड

मेरी सबसे पसन्दीदा किताब *हैरी पॉटर* है। यह किताब सात भागों में बँटी हुई है। इनमें से मुझे सबसे अच्छी *हैरी पॉटर एंड द प्रिज़नर ऑफ अज़्काबान* लगी। सबसे कम रोमांचक *हैरी पॉटर एंड द ऑर्डर ऑफ द फीनिक्स* लगी। यह जादुई दुनिया पर आधारित है। इस कहानी पर फिल्म भी बनी है। परन्तु फिल्में कहानी का एक हिस्सा ही दिखा पाती हैं। लेकिन किताबें हमें पूरी जादुई दुनिया में ले जाती हैं। किताबों की शौकीन होने के नाते मुझे यह आज़ादी है कि मैं अपनी कल्पना से उस दुनिया को खुद के नज़रिए से देख सकूँ। किताबें मेरे लिए कल्पना के पंख हैं। और मैं नहीं चाहती हूँ कि कोई भी इस कल्पना को सीमित करे।

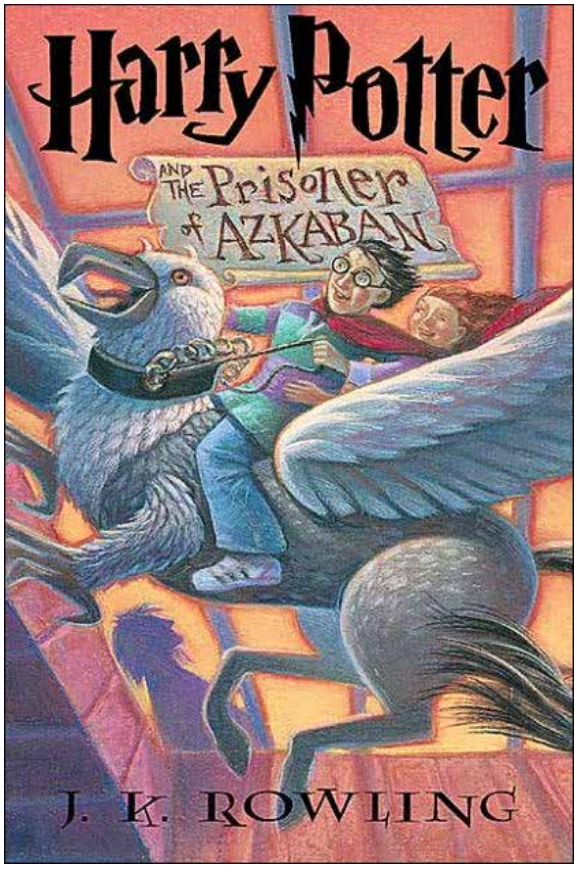

इस कहानी में हज़ारों रहस्य छिपे हैं जिन्हें लेखिका एक-एक करके इतनी शालीनता के साथ प्रकट करती हैं कि लोग उस कहानी को पढ़कर मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। हैरी पॉटर वास्तव में कोई सच्ची घटना या असली कहानी तो है नहीं, लेकिन यह हमें जीवन के अनगिनत सबक सिखा जाती है। इसे केवल कल्पना कहकर ठुकरा देना उचित नहीं होगा।

इसके पात्रों के संघर्ष, दोस्ती की ताकत, साहस और सच्चाई के लिए लड़ने की भावना हमें गहराई से छूती है। हमें इससे यह सीख मिलती है कि मुश्किलें चाहे कितनी भी बड़ी हों, यदि हमारे पास आत्मविश्वास और सच्चे साथी हों तो हम हर बाधा को पार सकते हैं। इस तरह इस किताब ने मेरे दिल पर एक छाप छोड़ दी है।

इसने मेरी कल्पना को एक नई उड़ान दी है और किताब पढ़ने का ऐसा शौक जगाया कि मैं केवल एक किताब तक सीमित नहीं रही। इस कहानी ने मुझे और भी किताबें पढ़ने के लिए प्रेरित किया। सच कहूँ तो इस कहानी ने मेरे भीतर किताबों के प्रेम को और मज़बूत बना दिया है।

मैं क्या खाऊँ?

उमा सुधीर
अनुवाद: विनता विश्वनाथन

मेरे कुछ युवा दोस्त हैं। वे हमेशा मेरी पहले से बनी धारणाओं को चुनौती देते हैं और मुझे सोचने पर मजबूर करते हैं। इनमें से एक दोस्त ने मुझसे शाकाहार के पीछे के नैतिक तर्क के बारे में लिखने को कहा। मैं सोचने लगी कि इसके पीछे क्या तर्क हो सकता है कि हमें मांस नहीं खाना चाहिए। क्या ये कि इसमें किसी जीव की जान लेना शामिल है? इस बात के खिलाफ मेरे दो तर्क हैं।

पहले मैं उस तर्क पर बात करना चाहूँगी जिसे मैं तार्किक तर्क कहती हूँ। हम में से बहुत कम लोग शिकारी-संग्रहकर्ता (hunter-gatherer) हैं। इसलिए हम जंगली जानवरों का शिकार करके उन्हें नहीं खाते। हम में से ज़्यादातर लोग पालतू जानवरों को खाते हैं, जिन्हें खास तौर पर हमारे खाने के लिए पाला जाता है। बॉयलर मुर्गियों को ही ले लो। अगर उन्हें खाया नहीं जाता, तो वे होती ही नहीं।

हम यह तर्क दे सकते हैं कि जानवरों को बहुत ही खराब हालात में पाला जाता है। इसका जवाब हो सकता है कि पोल्ट्री फार्म में हालात सुधारे जा सकते हैं, और सुधारे जाने भी चाहिए। और हम चाहें तो ज़्यादा महँगे फ्री-रेंज यानी खुले में घूमने वाली मुर्गियों को खाने का विकल्प भी चुन सकते हैं। बकरियाँ तो मुझे वैसे भी आधी जंगली ही लगती हैं, इसलिए मेरे हिसाब से उन्हें हम बिना किसी गिल्ट के खा सकते हैं।

अब आते हैं मेरे जैविक तर्क पर। जीवन विज्ञान की छात्रा होने के नाते मैं जानती हूँ कि पौधे और जानवर दोनों ही जीवित प्राणी हैं (फफूँद, बैक्टीरिया आदि भी)। तो फिर एक किंगडम को दूसरे से ज़्यादा एहमियत क्यों दी जाए? भला ये क्या बात हुई कि पौधों को मारना ठीक है, लेकिन जानवरों को नहीं? (कुछ जानवरों को दिए गए विशेष दर्जे के बारे में हम किसी और लेख में बात करेंगे।)

तुम कह सकते हो कि शाकाहारी लोग पौधों को नहीं मारते। लेकिन मैं इससे सहमत नहीं हूँ। उदाहरण के लिए चावल को ही ले लो। चावल धान से आता है, जो चावल के पौधे के बीज होते हैं। ये बीज अंकुरित होकर चावल के पौधों की एक नई पीढ़ी को जन्म दे सकते हैं। तो जब तुम एक प्लेट चावल खाते हो तो क्या तुम हज़ारों सम्भावित चावल के पौधों को मार नहीं रहे होते?

तो अगर तुम सोचो कि किसी की जान लिए बिना ही खाना है, तब तुम्हारे पास क्या विकल्प बचेंगे? चावल, गेंहूँ और दालें जैसी हमारी रोज़मर्रा के खाने की चीज़ें तो इससे बाहर हो जाएँगी क्योंकि ये सभी बीज हैं। यानी ये तो बीज-हत्या हो जाएगी। कुछ

ऐसा ही फलों के साथ भी है। मतलब कि नमक और लाल मिर्च छिड़के हुए कच्चे आम के टुकड़े भी लिस्ट से बाहर हो गए।

मैं यह मानकर चल रही हूँ कि तुम सिर्फ मरी हुई चीज़ें नहीं खाना चाहोगे? और यदि ऐसा चाहो भी तो तुम्हें मरी हुई चीज़ों को सड़ने से पहले खाना होगा, वरना तुम मरे हुए पौधे या जीवों के साथ बैक्टीरिया, फफूँद और कुछ कीड़े या लार्वा भी खा रहे होगे :-)

आलू जैसे संग्राहक तने भी नहीं खा सकते क्योंकि पौधा उनमें भविष्य में अपने विकास के लिए खाना इकट्ठा करता है। और आलू की हर आँख से एक नया पौधा उग सकता है। हाँ, तुम पत्ते ज़रूर खा सकते हो। लेकिन मैं बता दूँ कि वे पोषण का बहुत खराब स्रोत हैं। कुछ तने और जड़ें तुम्हारे खाने का हिस्सा हो सकती हैं, पर तभी तक जब तक कि वे पौधे के कायिक प्रवर्धन (बिना लैंगिक प्रजनन के पुराने से नए पौधों का बनना) में शामिल न हों।

हालाँकि ऐसा खाना जल्द ही बहुत बोरिंग हो जाएगा क्योंकि तुम स्वाद के लिए काली मिर्च, अदरक, मिर्च, जीरा, राई, लहसुन और कई दूसरे मसालों का इस्तेमाल नहीं कर पाओगे। कोई तड़का भी नहीं लग पाएगा क्योंकि ज़्यादातर तेल बीजों से मिलते हैं।

तुम कह सकते हो कि घी तो है! लेकिन क्या तुम जानते हो कि कुछ आदिवासी लोग गाय का दूध इस्तेमाल करना पाप मानते हैं क्योंकि वह बछड़े के लिए होता है? यानी ना मक्खन, ना पनीर और ना ही दही:-(

मेरी राय में अपनी डाइट के पर्यावरणीय असर पर विचार करना ज़्यादा ज़रूरी है। तुमने शायद बाजरा, ज्वार जैसे मोटे अनाजों को बढ़ावा देने के बारे में सुना होगा। पोषण सम्बन्धी बातों को छोड़ दें तो बाजरा पर्यावरण के लिए भी बेहतर है, क्योंकि इसे कम पानी की ज़रूरत होती है। गेंहू-चावल की फसल के लिए बहुत ज़्यादा पानी की ज़रूरत होती है, और गन्ने के लिए भी। गन्ने से ही हम चीनी बनाते हैं यानी मिठाइयों में भी कटौती करो!

इसी तरह अगर हम खाने के लिए जानवर पालते हैं तो उन्हें भी खिलाना पड़ता है। जानवरों को खिलाने के लिए चीज़ें उगाने के बजाय क्या यह बेहतर नहीं होगा कि हम ऐसी चीज़ें उगाएँ जिन्हें हम खुद खा सकें? एक मोटे अनुमान के अनुसार, 1 किलो माँस तैयार करने के लिए 7-8 किलो पौधों का खाना लगता है। इसलिए हमारी बढ़ती आबादी के साथ पूरी तरह से मांसाहारी डाइट समझदारी वाला विकल्प नहीं है।

यदि मैं अपनी बात करूँ तो मुझे मांस पसन्द है। लेकिन मैं इसे कभी-कभार ही खाती हूँ। मुझे मांसाहारी डाइट ज़्यादा तर्कसंगत लगती है क्योंकि मांस-मछली और अण्डे खाने से पोषण सम्बन्धी सभी ज़रूरतें पूरी करना बहुत आसान हो जाता है। वैसे मुझे जो भी दिया जाएगा, मैं खा लूँगी। मेरे लिए इससे बड़ी कोई लग्ज़री नहीं है कि कोई और खाना बनाए।

मैं खाने से जुड़ी वर्जनाओं को भेदभाव के औज़ार समझती हूँ। अगर तुम वह नहीं खा सकते जो कोई और खा रहा है, तो तुम उस व्यक्ति से दूर रहना पसन्द करोगे। फिर दोस्ती कैसे होगी? कौन क्या खाता है इस बात के आधार पर पूरी दुनिया में लोग निर्णय लेते हैं कि कौन अपना है और कौन पराया। ऐसी दुनिया में जहाँ भुखमरी अभी भी आम है, हम में से कई लोग जो मिलता है उसे खा लेंगे। और जब मुमकिन है तब हम अपनी पसन्द का खाना भी खाएँगे। इसलिए लोगों को उनकी डाइट के आधार पर आँकने में जल्दबाज़ी न करना। यह बहुत अनैतिक होगा!

अन्तर ढूँढो

एक जैसे दिखने वाले इन दोनों चित्रों में दस अन्तर हैं, तुमने कितने ढूँढे?

चित्र: नरेश पासवान

क्यों-क्यों

क्यों-क्यों में इस बार का हमारा सवाल था:

कुछ लोग चीज़ें दूसरों के साथ आसानी से बाँट लेते हैं, जबकि कुछ को यह मुश्किल लगता है — ऐसा क्यों होता होगा?

कई बच्चों ने हमें दिलचस्प जवाब भेजे हैं। इनमें से कुछ तुम यहाँ पढ़ सकते हो।

अगले अंक का सवाल है:

तुमने इस अंक में पेज 15 पर दिया लेख 'मैं क्या खाऊँ?' पढ़ा होगा। खाने के मामले में हमारी कई मान्यताएँ हैं — क्या खाना चाहिए, क्या नहीं। तुम या तुम्हारे परिवार वाले या दोस्त इस बारे में क्या सोचते हो, और क्यों?

तुम भी अपने जवाब हमें भेजना। जवाब तुम लिखकर या चित्र/कॉमिक बनाकर दे सकते हो।

अपने जवाब तुम हमें merapanna.chakmak@eklavya.in पर ईमेल कर सकते हो या फिर 9753011077 पर व्हॉट्सऐप भी कर सकते हो। चाहो तो डाक से भी भेज सकते हो। हमारा पता है:

चकमक

एकलव्य फाउंडेशन,
जमनालाल बजाज परिसर,
जाटखेड़ी, फॉर्चून कस्तूरी के पास,
भोपाल - 462026, मध्य प्रदेश

जिन लोगों को दूसरों पर भरोसा होता है वे अपनी चीज़ें आसानी से बाँटना पसन्द करते हैं। लेकिन जिन लोगों को भरोसा नहीं होता वे ऐसा करने में सहज महसूस नहीं करते। और कुछ साझा नहीं करते। मैंने अपनी एक दोस्त पर बहुत भरोसा किया था। लेकिन एक दिन मेरा उस पर से भरोसा उठ गया। मैंने उसे एक कलम दिया था जो मेरे लिए बहुत कीमती था। मैंने उसे इस कलम को सुरक्षित रखने के लिए कहा था। लेकिन उसने कलम को कूड़ेदान में फेंक दिया।

ई. हन्विता, सातवीं, रमणा विद्यालय, चंगलपेट, तमिलनाडु

मुझे अपनी चीज़ें दूसरों को देना अच्छा लगता है। मुझे दूसरों को चीज़ देने के लिए मना करना आता ही नहीं। मुझसे किसी ने कुछ माँगा तो मैं उसे वो चीज़ देना पसन्द करती हूँ। लेकिन जो लोग अपनी चीज़ें देना पसन्द नहीं करते। मैं उनसे भी सहमत हूँ। क्योंकि मुझे लगता है कि उन लोगों को वो चीज़ें ज़रूरी लगती होंगी। या उनकी पसन्द की होंगी तो उन्हें वो बाँटना अच्छा नहीं लगता होगा। ऐसा मेरा मानना है।

नयन मोरे, नौवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

मुझे ऐसा लगता है कि लोग चीज़ों को आसानी से इसलिए बाँटते हैं क्योंकि वे मिलनसार होते हैं। और दूसरों की मदद करना उन्हें पसन्द होता है। कुछ लोगों को चीज़ें बाँटना मुश्किल लगता है क्योंकि उन्हें शायद अपनी चीज़ों से लगाव होता है। या उन्हें यह सिखाया गया है कि दूसरों को कुछ नहीं देना चाहिए।

आरव राज, पाँचवीं, पी एम श्री केन्द्रीय विद्यालय नम्बर 1, श्रीविजयनगर, विशाखापट्टनम, आन्ध्र प्रदेश

हमारे घर में ज़्यादातर बच्चे मिट्टी, लकड़ी या नारियल के खोल से ही खिलौने बनाते हैं। मेरे पास एक ही ट्रक है जो मैंने पिछले साल मेले से लिया था। तब मैंने बहुत दिनों तक पैसे बचाए थे ताकि वह ट्रक खरीद सकूँ – लाल रंग का जिसके पीछे बालू रख सकते हैं। अब वो ट्रक मेरा सबसे प्यारा खिलौना है।

जब मेरा छोटा भाई खेलने को माँगता है तो पहले मैं नहीं देना चाहता था। डर लगता था कि कहीं वो गिरा न दे, तोड़ न दे। फिर मैं देखता कि वो उदास चेहरा बनाकर चुप हो जाता। माँ वहीं पास में महुआ सुखा रही होतीं। वो कहतीं, "बेटा चीज़ें बाँटने से खुशियाँ बढ़ती हैं। अकेले खेलोगे तो जल्दी ही बोर हो जाओगे।"

उनकी बात सुनकर मैं ट्रक उसे दे देता हूँ। फिर हम दोनों साथ में मिट्टी की सड़क बनाते हैं। पत्तों के पेड़ बनाते हैं और ट्रक से माल ढोते हैं। जब वो खिलखिलाकर हँसता है तो मुझे भी अच्छा लगता है। कभी-कभी मेरा ट्रक गन्दा हो जाता है पर मैं उसे साफ कर लेता हूँ। अब मुझे समझ आता है अगर हम चीज़ें बाँटते हैं तो खेल का मज़ा दुगुना हो जाता है।

अमृता धुर्वे, पाँचवीं, एकलव्य फाउंडेशन, शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र, कासदा रैयत, केसला, नर्मदापुरम, मध्य प्रदेश

जिनके लिए चीज़ें बाँटना आसान होता है वे अक्सर उदार प्रवृत्ति के और सहानुभूति वाले होते हैं। वे समझते हैं कि बाँटने से दूसरों को लाभ होता है और खुद के जीवन में भी सकरात्मकता आती है। दूसरी ओर जो लोग चीज़ें बाँटने में मुश्किल महसूस करते हैं वे अक्सर आत्मकेन्द्रित होते हैं या असुरक्षा की भावना से ग्रस्त होते हैं। वे अपने पास की चीज़ों को सुरक्षित रखना चाहते हैं और सोचते हैं कि बाँटने से चीज़ें कम हो जाएँगी।

इस प्रकार चीज़ें बाँटने की भावना व्यक्ति की मानसिकता और अनुभवों पर निर्भर करती है। मैं मानती हूँ कि बाँटने की आदत विकसित करना एक अच्छा गुण है। इससे दूसरों के साथ सम्बन्ध बेहतर होते हैं।

सौम्या यादव, सातवीं, शासकीय पूर्व माध्यमिक शाला, साराडीह, बलौदा बाज़ार, छत्तीसगढ़

क्योंकि उन्हें बातचीत करना बहुत पसन्द होता है। तुम सोच रहे हो ना कि बातचीत से बाँटने का क्या लेना-देना। पर किसी-किसी के दोस्त नहीं होते। इसलिए वह सभी को बाँटना पसन्द करता है। बाँटने से उसकी बातचीत होती है। कुछ लोग बाँटना पसन्द नहीं करते। क्योंकि वह चीज़ों की बचत करते हैं। कुछ गरीब होते हैं और उनके पास इतने पैसे नहीं होते कि वह सभी को चीज़ें बाँटें और मुझे लगता है कि हमें चीज़ों की बचत करनी चाहिए।

भूमिका परमार, पाँचवीं, अलिजियंस अकैडमी, कुक्षी, धार, मध्य प्रदेश

हमें लगता है कि उस व्यक्ति का आत्मविश्वास कमज़ोर होगा। इस कारण वह दूसरे लोगों के साथ घुलने-मिलने में समय लेता होगा। या दूसरे लोगों के साथ चीज़ें बाँटने व बात करने में कतराता होगा।

मोहम्मद खान, आठवीं, शासकीय पूर्व माध्यमिक शाला, लोधमा, जशपुर, छत्तीसगढ़

क्यों क्यों

कुछ लोगों के लिए ऐसा करना आसान होता है क्योंकि उनमें हिचकिचाहट, आशंका, डर आदि नहीं होता। जबकि कुछ लोगों के लिए यह मुश्किल होता है क्योंकि उनमें एक प्रकार की हिचकिचाहट होती है। डर होता है जो उन्हें यह करने से पहले कन्फ्यूज़ कर देता है कि यह करें या ना करें। ज़्यादातर लोगों में ऐसा डर की वजह से होता है। यह डर बचपन में घटी किसी घटना की वजह से हो सकता है, जो उसे लोगों से थोड़ा दूर कर देता है। और उसे लोगों से मिलने-जुलने में दिक्कत पैदा करता है। यही कारण है कि कुछ लोग अपनी चीज़ें दूसरों के साथ बाँट नहीं पाते।

मोहम्मद जीशान, आठवीं, शासकीय पूर्व माध्यमिक शाला, लोधमा, जशपुर, छत्तीसगढ़

क्योंकि कुछ लोग दूसरों के साथ आसानी से घुल-मिल जाते हैं। वे अपना सामान बाँटकर मित्रता की पेशकश करते हैं। परन्तु कुछ लोग ऐसा नहीं कर पाते हैं। इसके कई कारण हो सकते हैं। जैसे वे लोग मित्रता को महत्व नहीं देते। अकेले रहना पसन्द करते हैं। वे अपने आपको दूसरों से ज़्यादा महत्व देते हैं और अपना सामान अपने तक ही सीमित रखते हैं।

अनाया अरोड़ा, सातवीं 'बी', अलिजियंस अकैडमी, कुक्षी, धार, मध्य प्रदेश

मेरी मानो तो लोग अपनी-अपनी चाहत, पहचान और कभी-कभी ज़रूरत की वजह से अपनी चीज़ें दूसरों के साथ बाँटते हैं। पर हाँ कुछ लोग अपनी चीज़ें दूसरों के साथ बाँटने से हिचकिचाते हैं। शायद उन्हें ऐसा करना अच्छा नहीं लगता होगा या फिर चीज़ें देने में उनका अविश्वास आड़े आता होगा। शायद उन लोगों को अपनी चीज़ों से बहुत लगाव होगा। और उसे किसी और को देने में दिक्कत हो सकती होगी।

पर मुझे इसका एक मज़ेदार कारण भी सूझता है। शायद बचपन में उन्होंने अपनी कोई खास चीज़ किसी मित्र को दी हो। और उसने वो खास चीज़ उत्साहपूर्वक ली हो और देखते ही देखते वो टूट गई हो। या फिर उसे पानी में गिराकर खराब कर दिया हो। या ऐसा भी हो सकता है कि उसने वो गुमा दिया हो। जब ऐसा होता है तब बचपनी मन को बड़ा आघात पहुँचता है।

और जैसा हम सबको पता है कि बचपन का आघात जीवन भर साथ रहता है। इसलिए वे लोग अपनी चीज़ें शेयर नहीं कर पाते हैं।

प्रज्ञा शहा, नौवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

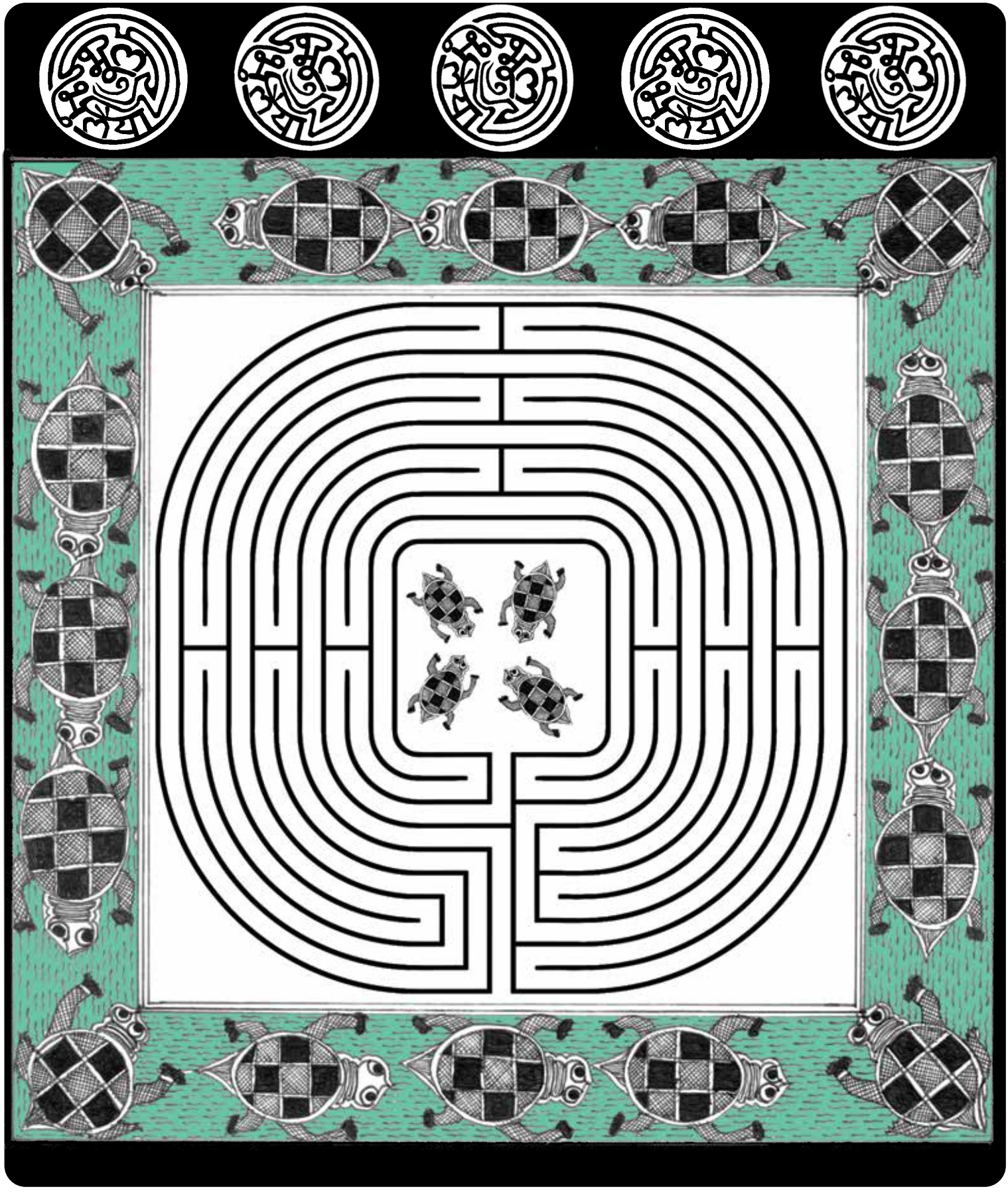

चित्र: नरेश पासवान

खिड़की

लवलीन मिश्रा
चित्र: प्रशान्त सोनी

हमारा घर छोटा था। उसमें दो कमरे थे। दोनों छोटे। जो बाहर वाला कमरा था, वो अरमानों वाला कमरा था। वो अन्दर वाले छोटे कमरे से हल्का-सा बड़ा था यानी वो बड़ा होने का अरमान रखता था।

लेकिन मज़े की बात यह है कि अन्दर वाला कमरा जो वाकई छोटा था बड़ा मालूम पड़ता था। जनाब, अब ये तो आप भी जानते हैं कि छोटा-बड़ा, असली-नकली, ऊँच-नीच सब नज़र का खेल है। अब देखिए ना, रसोई छोटी थी लेकिन अम्मी इसी रसोई में 25-30 मेहमानों का खाना बड़े आराम से बना लेती थीं। और बाथरूम, आ हा हा हा हा! उसमें घुसने के बाद दो-तीन बार थोड़ा मुड़-मुड़कर ही आप दरवाज़ा बन्द कर पाते थे।

छोटे कमरों का साथ देने के लिए घर की छत भी छोटी थी। मतलब नीची थी। ऐसा लगता था किसी भी दिन पंखा मुझ पर आ गिरेगा।

हमारा परिवार भी छोटा था। दादी, अब्बू, अम्मी और मैं सफीना नियाज़ी। और हाँ, दादी भी छोटी ही थीं। उम्र में नहीं, कद में। चार फुट दस या ग्यारह इंच की। लेकिन कोई पूछता तो झट से कहतीं, "हम पूरे पाँच फुट के हैं। अब उम्र के साथ थोड़ा सिकुड़ गए हैं।" मैंने बताया था कि अन्दर वाला कमरा छोटा होकर भी छोटा नहीं लगता था। उसकी वजह थी उस कमरे की खिड़की।

वह खिड़की ज़रूरत से ज़्यादा बड़ी थी। पलंग पर लेटो तो अहाते के एन्ट्रन्स से लेकर आसमान तक सब दिखता था। दादी कहती थीं कि उस खिड़की से उन्हें पूरा जहाँ दिखता था।

खिड़की के ऊपर एक मेहराब था। अब्बू ने मेहराब में नीले रंग का काँच लगवाया था। खिड़की के दोनों पलड़ों के ऊपरी हिस्से में हरे काँच की पतली पट्टी थी। उस खिड़की से बाहर की दुनिया जैसे एक ही फ्रेम में आ जाती थी। चूँकि हमारा घर अहाते की बीच वाली इमारत में था, इसलिए दाएँ-बाएँ दोनों तरफ के घर दिखते थे। साथ ही एन्ट्रन्स की गली भी। और खिड़की पर बैठो तो आँगन भी। इतने छोटे-से घर के छोटे-से कमरे में इतनी बड़ी खिड़की की क्या ज़रूरत थी?

गठिया की वजह से दादी सीढ़ियाँ नहीं उतर पाती थीं। हाँ, तीज-त्योहार, शादी-मुंडन, गणतंत्र दिवस या कोई खास दिन हो, तब ज़रूर उतरती थीं। पर अक्सर नहीं। लेकिन वे चाहती थीं कि गठिए के बावजूद वे पास-पड़ोस के हालचाल ले सकें, उनसे गुफ्तगू कर सकें। सो अब्बू ने खिड़की के साथ दो-ढाई फुट चौड़ा संगमरमर का एक चबूतरा भी बनवाया था जिस पर सादिया बी तशरीफ रखतीं और मोहल्ले के लोगों से रूबरू होतीं। अम्मी इसे दादी का 'झरोखा दर्शन टाइम' कहती थीं।

खिड़की पर बढ़िया धूप आती थी। नहा-धोकर नाश्ता करने के बाद दादी पाँव पसारे तशरीफ रखतीं। सर्दियों में दादी जब नहातीं तो अन्दर से पानी की कोई आवाज़ नहीं आती थी। बाहर आतीं तो टेल्कम पाउडर से सराबोर होतीं और तौलिया ज़रूरत से ज़्यादा गीला। गर्मियों में ये महफिल-ए-खिड़की शाम को लगती थी। दादी दुपट्टा ओढ़, अपना चाय का मग लिए – जिसके ऊपर दो पाव रखे होते – महफिल में चार चाँद लगाने पहुँच जातीं। छोटे बच्चे उन्हें खिड़की वाली दादी के नाम से पुकारते थे। दादी आवाज़ देतीं, "अरी! ओ मीनू, सिद्धू की मम्मी, ज़ुलेखा, शाज़िया कहाँ हो सब?" दादी की पुकार सुनते ही कई सारे खिड़की-दरवाज़े खुल जाते।

दादी पिच्यासी के ऊपर रही होंगी। लेकिन सब के नाम याद रखकर खैरो खबर लेतीं। नाम याद न होते तो अपने नाम दे देतीं। निवेदिता आंटी को उन्होंने बड़ी बिन्दी वाली के नाम से नवाज़ा था, तो सूरज अंकल सिलेंसर फैल, महनाज़ आंटी कजरारे नैन, गणेश भैया हर्फन मौला, और ऐसे ही कई सारे नाम। कोई माँगता या उन्हें ज़रूरी लगता तो सलाह देतीं, बीमारियों के नुस्खे बतातीं। किसी का बच्चा नौकरी, शादी या पढ़ाई के सिलसिले में बाहर जा रहा होता तो दादी हमेशा दुआएँ देतीं। मेरे हाथ छोटा-सा नज़राना भी भिजवा देतीं। दादाजी सरकारी नौकरी में थे तो दादी को इस बदौलत छोटी-सी पेंशन भी मिलती थी। मोहल्ले का सबसे बिज़ी इन्सान खिड़कीवाली दादी थीं।

अक्सर जब मैं कॉलेज से लौटती तो कोई न कोई पड़ोसी मुझे रोक दादी की पसन्द का पकवान पकड़ा देता। दादी की गंगा में हम भी हाथ धो लेते। दम पुख्त बिरयानी, मूँग दाल का हलवा, पनीर कुल्चा या साग मीट नोश फरमाते। किसी दिन हिम्मत कर दादी सीढ़ियाँ उतरकर मोहल्ले के आँगन में उतरतीं तो किसी लीडर से कम रुतबा न होता उनका। चारों ओर से आवाज़ें आने लगतीं, "सादिया बी आई हैं।" "सादिया बी के लिए कुर्सी लाओ।" कभी उनके मखनी गालों की तारीफ की जाती तो कभी अपने नाती-पोते या नई बहू को दादी का आशीर्वाद दिलवाया जाता वगैरह-वगैरह।

कभी-कभी ऐसा भी होता कि दादी खिड़की पर बैठी रहतीं और कोई गपियाने न आता। आखिर सब घर-गृहस्थी वाले थे, और भला गृहस्थी के काम कभी खतम होते हैं? लेकिन खिड़की फिर भी खुलती। दादी ब्रेड या बासी रोटी के टुकड़े कर खिड़की के बाहर बिखेर देतीं। देखते ही देखते बिजली की रफ्तार से कौवे, गौरैया, तोते और मैना उनकी खिड़की पर धावा बोलते। दादी उन्हें कोई गाना सुनातीं या किसी उतावले परिन्दे को डाँट देतीं, "परिन्दे भकोसते नहीं, चुगते हैं और अपने चूज़ों के लिए अपने घोंसले में ले जाते हैं।" फिर किसी उतावले कौवे को हवा में लात मार के डरातीं, "नासपिटा कहीं का, तेरी अम्मी ने तुझे सब्र करना नहीं सिखाया।"

रेखा आंटी जो हमारे घर के नीचे रहती थीं, रोज़ अम्मी को सुनातीं, "ये अच्छा है! चिड़ियों को दाना डाल दादी पुण्य कमाएँ। और हम चिड़िया की टट्टी साफ करते फिरें। कभी हमारे स्कूटर पर हग देते हैं, कभी कपड़ों पर और कल तो प्रसाद सीधे हमारी खोपड़ी पर मिला।"

दादी की चुस्ती या याद्दाश्त की तारीफ करने की देर थी कि वो और जवान हो जातीं। दस काम और कर देतीं। फिर इतना थक-फुक जातीं कि बाकी दिन दर्द और थकान के मारे बिस्तर पर आराम करतीं।

उस शाम अब्बू बहुत थके और परेशान लौटे थे। न चाय पी, न दादी के हालचाल लिए। घुसते ही, हाथ-मुँह धोकर टीवी पर न्यूज़ देखने लगे। वह बाज़ार से सब्ज़ी भी नहीं लाए थे। अम्मी इसी बात को लेकर झींक रही थी। "अब हमें जाना पड़ेगा। वो नितिन सब्ज़ीवाला एक नम्बर का लुच्चा है। अच्छी सब्ज़ी अपने लोगों के लिए रखता है।"

"ये अपने लोग, उनके लोग वाली बकवास मत करो फरहाना। जो उसकी सब्ज़ी का दाम देगा, वो उसे बेचेगा।"

अम्मी ने कोई जवाब नहीं दिया। न्यूज़ में किसी जगह हुए दंगों और बढ़ते हुए तनाव की रिपोर्ट दिखा रहे थे। दादी अपने घुटनों और तलवों में सरसों का तेल मलते हुए, चुपचाप बैठी टीवी देख रही थीं। अचानक बोलीं, "ये तो अपने जहांगीरपुरी वाला चौक है ना मुजीब?"

अब्बू ने टीवी फौरन बन्द कर दिया। "आपको चौक देखे मुद्दत हो गई है, अम्मी। दिल्ली में ऐसे बीसियों चौक हैं।" इससे पहले कि दादी जवाब देतीं, अब्बू बोल पड़े, "देख क्या रही हो फरहाना? खाना लगाओ।" हम तीनों एक-दूसरे को देख रहे थे। सभी को अन्देशा था कि क्या हो रहा है और क्या हो सकता था। मन में लाखों सवाल का भंवर घूम रहा था। पर कोई कुछ कह नहीं रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे किसी ने हमारे कमरे, घर और पूरे मोहल्ले पर खामोशी की एक जर्जर चादर बिछा दी हो। अम्मी ने चुपचाप अब्बू के हुकुम की तामील की और रसोई की तरफ रुख किया।

अचानक इस चादर को चीरते हुए चीखने-चिल्लाने और नारेबाज़ी की आवाज़ें सुनाई देने लगीं। दादी ने अपनी मालिश बन्द कर दी। उनके कान हर आवाज़ को माप रहे थे। अब्बू ने मूड नॉर्मल बनाए रखने की कोशिश की, "अरे! सफीना, गुलशन की दुकान से इस्त्री उठा ली थी?" "जी नहीं अब्बू। उनकी दुकान का शटर बन्द था। आज पता नहीं क्यूँ काफी दुकानें बन्द थीं। बेकरी भी। इसलिए दादी का पाव भी नहीं मिला।"

हमने देखा कि दादी बड़े जतन से उठीं और फुर्ती से अन्दर वाले कमरे की ओर चल पड़ीं। अब्बू पीछे से चिल्लाए, "अम्मी खुदा के लिए, वो खिड़की मत खोलना!" "खोलूँगी!! तुम न कुछ बताते हो, न टीवी पर खबरें देखने देते हो," दादी ने बड़े-बड़े कदम लेते हुए कहा। उनके तेल लगे पाँव फिसल रहे थे। अब्बू ने मुझे इशारा किया कि मैं दादी को रोकूँ। मैं उनके पीछे भागी। लेकिन जब तक मैं पहुँचती, दादी का बैलेंस बिगड़ गया और वो धम्म से बिस्तर पर औंधी गिर गईं। छोटे कमरे का यही फायदा है – कहीं से भी गिरो, शर्तिया बिस्तर पर ही गिरोगे।

खैर, किसी तरह से अब्बू और मैंने उन्हें सीधा कर बिस्तर पर लिटाया। वे दर्द में थीं, लेकिन उनकी नज़र बाहर की ओर बनी रही। खिड़की के निचले हिस्से के समतल काँच से वे साफ देख पा रही थीं। दो-तीन जगहों से धुएँ की मीनारें उठ रही थीं। कहीं शोर, कहीं चीख और एक-दो जगह आग भी दिखाई दे रही थी। साथ ही राम और अल्लाह की दुहाई देते हुए नारेबाज़ी भी सुनाई पड़ रही थी। दादी की आँखें फटी की फटी रह गईं। अब वे शून्य में देख रही थीं। मैं दिलासा देते हुए उनकी हथेलियों को सहला रही थी। "सफीना, हम फिर से बेघर किए जाएँगे। कब तलक हम यहाँ से वहाँ पटके जाएँगे? या खुदा, रहम कर, रहम कर," दादी बोलीं।

अम्मी तब तक दादी के लिए खाना परोस लाई थीं। दादी ने फिर पूछा, "मुजीब हमारे मोहल्ले में सब खैरियत है ना? एक बार ज़ुलेखा, शाज़िया, अख्तर सब की खैरियत पूछ लो।" अब्बू फूट पड़े, "अम्मी ये खैरो खबर लेना-देना कल सुबह अपनी खिड़की पर

करना। अभी खाना खाएँ... शाम वाल
गोली ले ली?" अम्मी ने देखा कि दाद
के दुपट्टे में गाँठ अब भी बँधी हुई थी
उन्होंने गाँठ खोली, गोली निकाली औ
दादी को दी।

उनको खिलाने के बाद हम सभी
बिस्मिल्लाह किया और बाहर वा
कमरे में चुपचाप खाना खाया। मोहल्ल
में दम घुटने वाली चुप्पी थी। कभी
कभार कोई ट्रक या टेम्पो का हॉ
सुनाई देता। इसके अलावा कुछ नहीं
रात काफी देर तक अब्बू दबी हु
आवाज़ में फोन पर बात कर रहे थे
मुझे याद नहीं दादी को सुलाते-सुला
मैं खुद कब सो गई।

मैं गहरी नींद में थी जब दादी उठी
खिड़की के बाहर का मुआयना किय
और हौले से बाहर चली गईं। बाहर
कमरे में अब्बू-अम्मी मोबाइल टॉर्च क
रोशनी में फुर्ती से सामान बाँध रहे थे
चारों ओर सामान बिखरा पड़ा थ
"हाय! अल्लाह, ये क्या कर रहे ह
मुजीब?" दादी हैरानी से बोलीं
"अफजल अपने टेम्पो में हमें लेने आ
रहा है। कुछ दिन वहीं रहेंगे। एक बार
हालात सँभल गए तो यहाँ वापिस आ
जाएँगे अम्मी," अब्बू ने तसल्ली देते हुए
कहा। "मुझे कहीं नहीं जाना है," कहते
हुए दादी अपना सामान उठाने लगीं।

अब्बू ने उनके हाथ से सामान छीन
लिया और बोले, "अम्मी, आपने न्यूज़ देखी
थी ना? यहाँ रहने में बहुत खतरा है।"

"अपने लोगों से कैसा खतरा? मुजीब
तुम्हें हो क्या..." दादी बोल ही रही थीं
कि अब्बू ने बात काटते हुए कहा, "आप

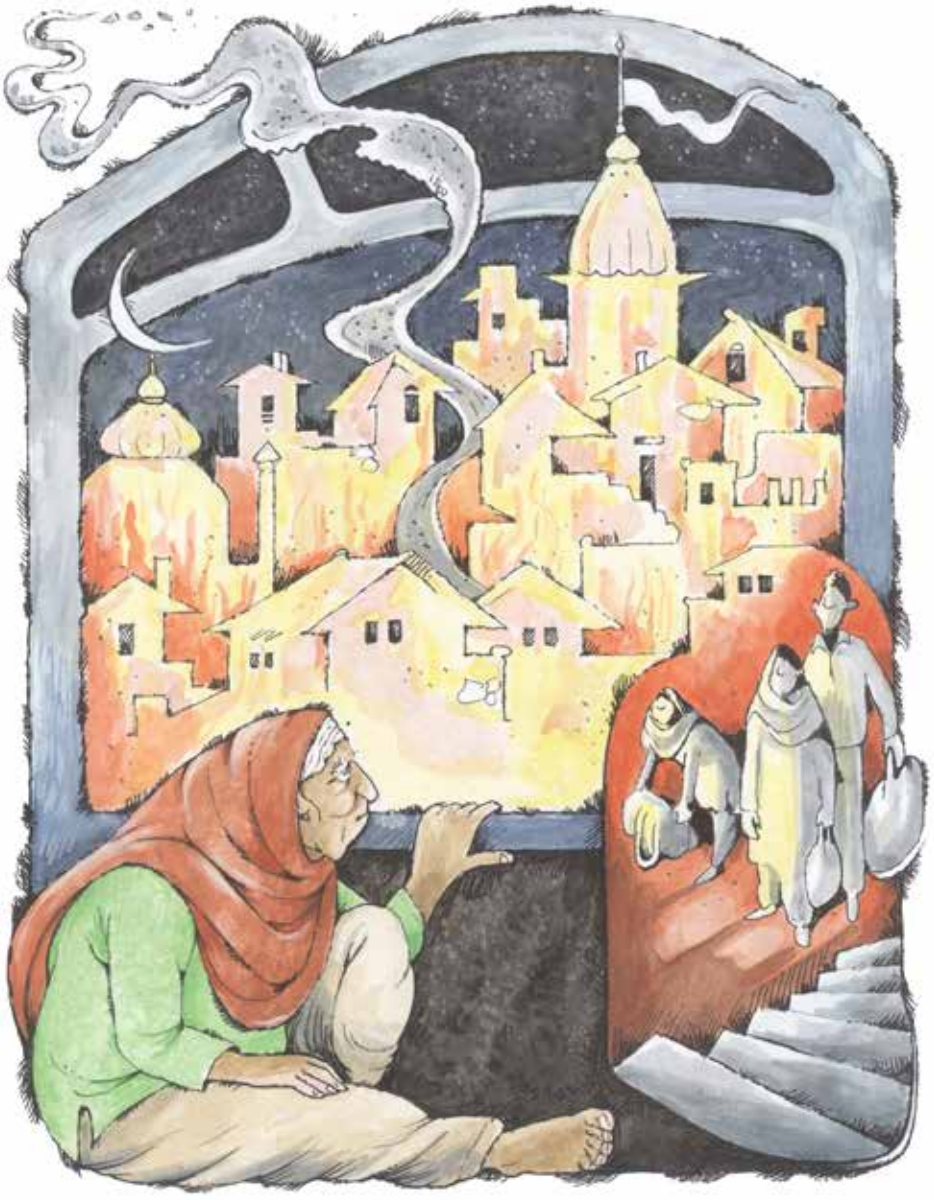

पूछ रही हैं मुझे क्या हुआ है? मैं ये जानना चाहता हूँ कि इस मुल्क को क्या हो गया है?"

तभी मैं हड़बड़ाई हुई कमरे में आई।

दादी बोले जा रही थीं, "रावलपिण्डी में हमारे दादाजी ने यही कहकर हमें ताँगे पर चढ़ा दिया था... भागना-वागना छोड़ो मुजीब।"

"अगर दंगाई आए तो हमें मार देंगे अम्मी। उससे पहले निकल जाते हैं। ज़िद न करें," अब्बू बोले। मेरे मुँह से हिचकिचाते हुए बोल निकले, "दादी फोन पर बहुत से मैसेज आए हैं। सब यही कह रहे हैं कि जल्दी से किसी महफूज़ जगह चले जाओ।"

"सबसे महफ़ूज़ जगह तो अल्लाह मियाँ का घर है। वहीं चली जाती हूँ," दादी बोलीं।

तभी अब्बू का फोन बजा। इतनी खामोशी में अफजल मामू की आवाज़ साफ सुनाई दे रही थी। "पाँच मिनट में मेन रोड पहुँचिए। पुलिस बन्दोबस्त काफी है, इसलिए एक मिनट की भी देरी ना हो..."

"हाँ हाँ, बस हम पहुँच रहे हैं," कहकर अब्बू ने फोन काट दिया। उनका माथा पसीने से लथपथ था। हम तीनों फौरन इधर-उधर नज़र दौड़ाने लगे। रसोई, बाथरूम और दोनों कमरों में जो सामान ज़रूरी समझा, उठा लिया। दो मिनट बाद अब्बू ने घर का दरवाज़ा खोला और धीरे से बोले, "अब बस नीचे उतरना शुरू करते हैं। बिना कोई आवाज़ किए। अम्मी चलो! अम्मी? अम्मी कहाँ गईं?"

इतने छोटे-से घर में दादी कहाँ जातीं। अन्दर वाले कमरे में बैठी थीं, डरी हुईं लेकिन अपने फैसले पर डटी हुईं।

"मुझे यहाँ कोई खतरा नहीं। तुम लोग जाओ," दादी बोलीं।

"अम्मी हमारे पास टाइम नहीं है," अब्बू बोले।

"दादी चलिए ना...।" धीरे से मैंने कहा।

इस बहस का कोई अन्त नहीं था।

पता नहीं किस बात से उनका दिल पसीजा और वे उठ खड़ी हुईं। मोबाइल टॉर्च से उन्हें रास्ता दिखाते हुए हम जीने से उतरकर आँगन में पहुँचे। नीचे उतरकर दादी अपनी नज़र एक-एक खिड़की, एक-एक दरवाज़े पर दौड़ा रही थीं, मानो सबसे माफी माँगते हुए खुदा हाफिज़ कह रही हों।

तभी भानु अंकल का पालतू कुत्ता सनी दुम हिलाते हुए दादी के सामने आ गया। इतने अँधेरे में उसे देख हम सब चौंक गए और अफरा-तफरी मच गई, जिसमें दो-तीन बाल्टियाँ, गमले और कुछ साइकिलें ढुलक गईं। शोर मचने के कारण काफी लोग अपने घरों से बाहर आ गए। लाइटें जल गईं। शम्भू चाचा और उनके दो बेटे हाथ में डण्डे पकड़े हुए बाहर निकले।

"कौन है वहाँ? जवाब दो... मुजीब, सफ़ीना? और दादी?"

मोंटू बोला, "फरहाना आंटी? मुजीब, कहाँ जाने की तैयारी है?"

भीड़ अब बढ़ गई थी। कई औरतें भी इसमें शामिल हो गई थीं।

"जहांगीर पूरी के हालात देखते हुए हम सोच रहे थे कि कुछ रोज़ कहीं और रहने चले जाएँ।" अब्बू बोले।

"चोरों की तरह?" रेखा आंटी ने पूरे हक से पूछा, "दादी आप कहाँ जा रहे हो?"

दादी बुदबुदाईं, "किसी महफ़ूज़ जगह?"

"आप यहाँ महफ़ूज़ नहीं हैं?" हर्फन मौला भैया बोले, मुजीब अंकल आपको क्या हो गया है?"

"ये तो उन दंगाइयों से पूछें जिनकी वजह से...," अब्बू बोल ही रहे थे कि दादी गिड़गिड़ाईं, "हमें जाने दो बेटा। हमारी वजह से तुम लोगों को भी खतरा है।"

"दादी, शाज़िया, जुलेखा सब यहीं है। खतरा सिर्फ आपको नहीं है?" कहते हुए बबलू ने ऊपर नज़र दौड़ाई तो ज़ुलेखा, शाज़िया और कौसर के घरों पर ताला लगा था। यह देख सब सकते में आ गए।

छाबरा अंकल बोले, "जिन्हें जाने का मन है उन्हें जाने दो ना। साला हम क्यूँ इनके पीछे अपनी जान गँवाए?"

अब्बू का फोन लगातार बजे जा रहा था। इतने में मुरली चाचा बोले, "छाबरा जी, आज ये धमकाए गए हैं, कल कोई और... बड़े आका लोग हमें बाँटते जाएँगे और हम अलग होते चले जाएँगे?" सिद्धू की मम्मी तपाक से बोलीं, "कितनी शर्म की बात है ना। ज़ुलेखा, कौसर और शाज़िया को भी हमने अपना

नहीं समझ।" सब ने नियाज़ी परिवार के इर्द-गिर्द एक बैरीकेड-सा बना लिया।

मीनू आंटी सामने आईं। दादी का हाथ पकड़कर उनकी पोटली सँभाली और बोलीं, "हमारी दादी कहीं नहीं जाएँगी। हम सब खतरे का सामना करेंगे।" सभी ने हामी भरी, खासकर सभी औरतों ने। चारपाइयों, ईटों और बड़े पत्थरों के ज़रिए मोहल्ले से निकलने का रास्ता ब्लॉक किया जा रहा था। दादी जब घर लौटीं तो उन्होंने सबसे पहले खिड़की खोली और एक गहरी साँस ली।

पौ फटने को थी। आसमान एक सुनहरी लालिमा ओढ़े हुए था। सुबह की ताज़ी हवा में दादी के महीन सफेद बाल परिन्दों के पंख की तरह फड़फड़ा रहे थे।

आँगन में कुछ लोग अब भी मौजूद थे।

न कोई छोटा था, न बड़ा।

क्यूँकि खतरा सब को था।

और सभी महफूज़ थे।

चित्र पहेली

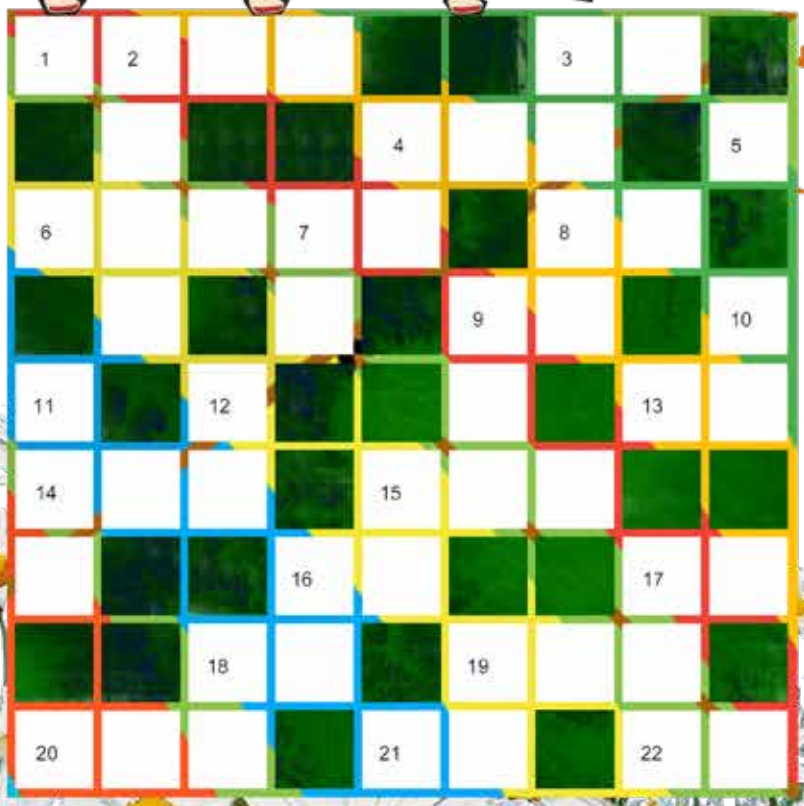

सुडोकु 92

5	3	7		9	2	8		
1	8	2	7	4	5		6	
	4	6		8	3	2		5
				5			3	4
	1	9				5	2	
3	2				1		8	6
		1				6		
2	6	4	9	1			5	
	9			6	7	4		

दिए हुए बॉक्स में 1 से 9 तक के अंक भरने हैं। आसान लग रहा है ना? पर ये अंक ऐसे ही नहीं भरने हैं। अंक भरते समय तुम्हें यह ध्यान रखना है कि 1 से 9 तक के अंक एक ही पंक्ति और स्तम्भ में दोहराए ना जाएँ। साथ ही साथ, गुलाबी लाइन से बने बॉक्स में तुमको नौ डब्बे दिख रहे होंगे। ध्यान रहे कि हर गुलाबी बॉक्स में भी 1 से 9 तक के अंक दुबारा ना आएँ। कठिन भी नहीं है, करके तो देखो।

जवाब पेज 42 पर

यह तीर कहाँ से चला?

जितेश शेल्के

आगे बढ़ने से पहले, या यूँ कहूँ कि आगे पढ़ने से पहले, अपनी आँखें बन्द कर लो। अब एक तीरंदाज़ की कल्पना करो।

मैं यकीन से कह सकता हूँ कि तुम्हारे मन में सबसे पहले दो मज़बूत हाथों की तस्वीर बनी होगी। एक में धनुष होगा और दूसरे में खिंचती हुई डोरी। आँखें पूरी तरह तनी हुई होंगी। है ना? हमारी कल्पना में तीरंदाज़ी की दुनिया तभी खुलती है, जब दोनों हाथ सही-सलामत हों। मेरी सोच भी कुछ ऐसी ही थी।

फिर एक दिन झूप्पप करके जैसे कोई तीर मेरी इसी सोच के बीचोंबीच जा लगा। उस छोटे-से छेद से झाँकते हुए मैंने पहली बार शीतल देवी को तीर चलाते देखा। खेलों की दुनिया भी अजीब है। जब तक कोई कमाल ना कर दे, हमारी नज़र ना तो उस खेल पर जाती है, ना ही खिलाड़ी पर।

शीतल देवी जम्मू-कश्मीर के किश्तवाड़ ज़िले के लोईधार गाँव से हैं। एक ऐसी लड़की, जो बचपन में पेड़ों पर ऐसे चढ़ जाती थी जैसे बाकी बच्चे सीढ़ियाँ चढ़ते हैं। तुम सोच रहे होगे, "इसमें नई बात क्या है?" नई बात है ये कि शीतल का जन्म फोकोमेलिया नाम की दुर्लभ स्थिति के साथ हुआ था। इस स्थिति में हाथ पूरी तरह विकसित नहीं हो पाते। यानी वह पैरों से खेलतीं, चढ़तीं, लटकतीं। और बाद में उन्होंने अपने इन्हीं पैरों के ज़रिए दुनिया को चौंका दिया।

टीवी पर जब मैंने उन्हें पहली बार देखा तो हक्का-बक्का रह गया। आँखें फटी रह गईं। "अरे! ये कैसे हो सकता है? बिना हाथों के तीरंदाज़ी? मैं ठीक से देख रहा हूँ या नहीं?"

नवम्बर में शीतल देवी ने जेद्दा में होने वाले एशिया कप चरण 3 के लिए भारत की सक्षम जूनियर टीम में जगह बनाई है। वह सक्षम राष्ट्रीय टीम के लिए चयनित होने वाली पहली भारतीय पैरा एथलीट हैं। यह एक ऐतिहासिक उपलब्धि है। इसी के साथ सक्षम तीरदांज़ों के साथ प्रतिस्पर्धा करने का उनका सपना पूरा होने जा रहा है।

शीतल देवी व्हील चेयर पर बैठीं। फिर उन्होंने अपने पैरों से धनुष को उठाया इतनी सहजता से, जैसे धनुष पैरों से ही चलाया जाता हो। उनकी हर हरकत में एक अजीब-सी शान्ति थी, और उस शान्ति में छिपी थी गज़ब की ताकत। उन्होंने तीर चढ़ाया। मैंने आँखें मल लीं, क्योंकि अब यकीन करना ही था। फिर तीर चला। सीधा, तेज़, एकदम आत्मविश्वास से भरा हुआ। और उस पल मुझे लगा जैसे लक्ष्य को भेदने से पहले तीर मेरी सोच को भेद गया।

यह वो पल था, जब हांगझोऊ में आयोजित 2022 के एशियाई पैरा खेलों में शीतल देवी ने पदक जीता था। और हम जैसे लोगों की सोच को भी हिलाकर रख दिया था।

अक्सर हम यह कहते हैं कि हर खेल एक निश्चित ढाँचे में ही खेला जाता है। और फिर जब कोई उस ढाँचे से बाहर निकलकर कुछ करता है, तो हम चौंक जाते हैं। शीतल देवी ने भी ऐसा ही किया। हमें हैरत में डाल दिया। वो सिर्फ तीर नहीं चलातीं, बल्कि हमारी छोटी, सिकुड़ी हुई सोच पर भी सवाल उठाती है।

घर लौटकर मैंने तीरंदाज़ का चित्र फिर से बनाया। मैं चाहूँगा कि तुम भी फिर से बनाओ।

हांगझोऊ में आयोजित 2022 के एशियाई पैरा खेलों में शीतल देवी के मैच देखने के लिए इस QR कोड को स्कैन करो।

जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम में खेलो इंडिया पैरा गेम्स के दौरान शीतल देवी और ओड़िशा की पायल नाग।

माथापच्ची

फटाफट बताओ

क्या है जो आधा खाने पर
भी पूरी ही रहती है?

(ग्रिप)

क्या है जिसे इस्तेमाल
करने के लिए फेंक देते
हैं और जब इस्तेमाल ना
करना हो तो रख देते हैं?

(प्रगंफ)

अलग-अलग पर एक ही नाम
रूप एक-सा एक ही काम
बोल ना जाने सुनते संग
इन दोनों के बीच सुरंग

(नाक)

बड़ा गज़ब का मेरा काम
एक को मैं दो कर देता
बूझो जल्दी मेरा नाम

(ान्ड्राइ)

बिना पैर के चलती जाऊँ
लोगों को मंज़िल तक पहुँचाऊँ

(ड़िाग)

बिन पंखों के उड़ती हूँ
बिना हाथ के लड़ती हूँ

(गंफप)

1. दी गई संख्याओं को खाली खानों में इस तरह भरो कि आड़े व खड़ी में लिखी संख्याओं का जोड़ बराबर हो।

1 2 3 4 5

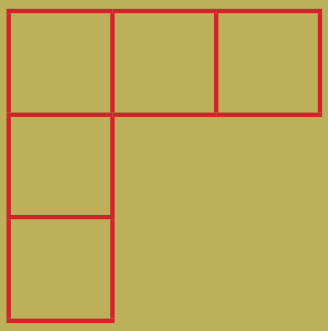

2. सोमवार का दिन था। दो चोर बैंक लूटकर कार में बैठे। पुलिस ने चोरों का पीछा किया तो पता चला कि चोरों की कार की पीछे की नम्बर प्लेट की हैडलाइट खराब थी। और पुलिस की जीप की हैडलाइट भी खराब थी। फिर भी पुलिस ने उन चोरों को पकड़ लिया, कैसे?

3. सभी खाली जगहों में एक ही अंक आएगा। कौन-सा?

1[ ] x [ ] = [ ]9

4. दी गई ग्रिड की हर पंक्ति व हर कॉलम में अलग-अलग गेंद आनी चाहिए। इस शर्त के आधार पर खाली जगहों में कौन-सी गेंद आएँगी?

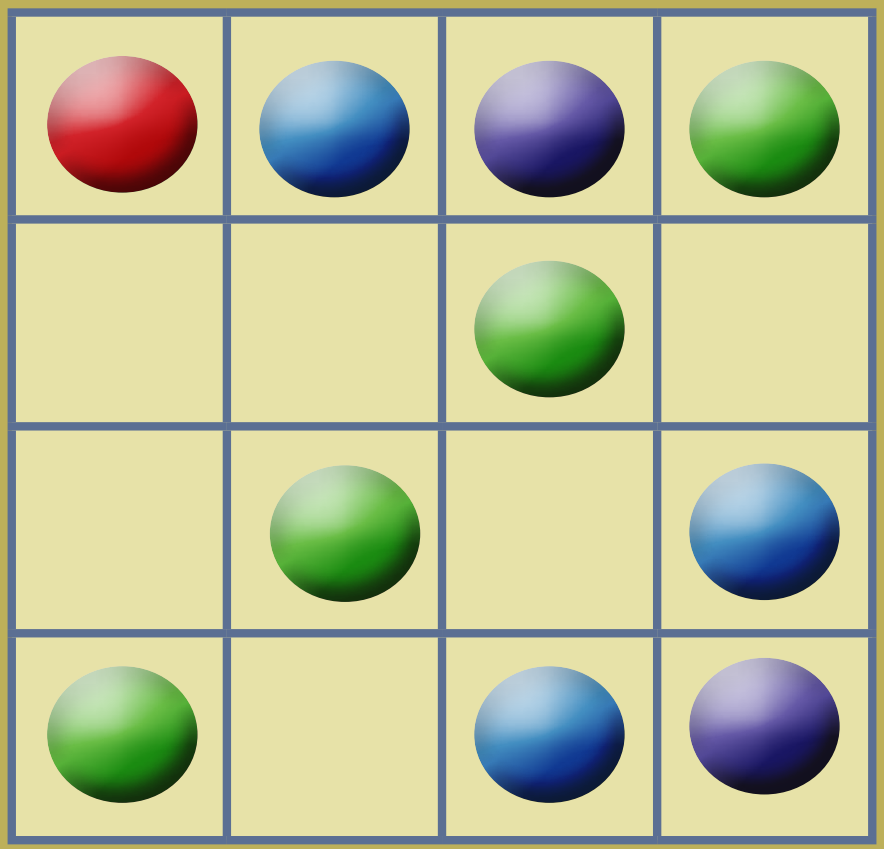

5. केवल एक तीली को इधर-उधर करके दिए गए समीकरण को सही करना है, कैसे करोगे?

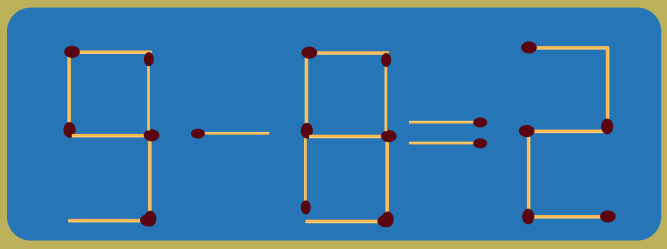

6. एक व्यापारी 3 बोरे लेकर शहर की ओर जाता है। हरेक बोरे में 30 नारियल हैं। रास्ते में 30 चैक-पोस्ट आती हैं। यदि हरेक चैक-पोस्ट पर उसे प्रत्येक बोरे के लिए एक नारियल देना पड़े तो आखिर में उसके पास कुल कितने नारियल बचेंगे?

7. ऊपर दिए गए समीकरणों की मदद से नीचे वाला समीकरण हल करो।

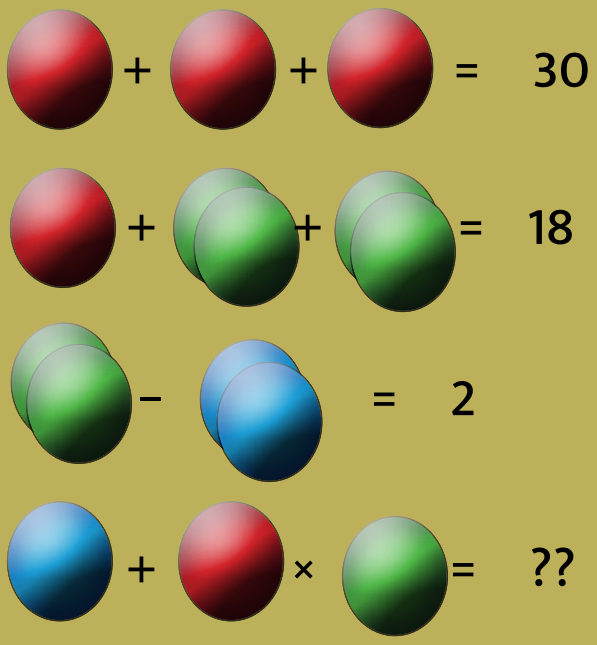

8. दिए गए वाक्यों में कुछ शहरों के नाम छिपे हुए हैं। ज़रा ढूँढो तो।

1. पापा को टाई बाँधना नहीं आता।
2. कुछ पराठे बचे हुए हैं।
3. आग रात में लगी थी।
4. घर का बना रसगुल्ला मुझे बहुत पसन्द है।
5. अमिताभ टिण्डा खाना बिलकुल पसन्द नहीं करता।

श	क	र	कं	द	स	नौ	कि	पे
रे	मा	शॉ	ब	ला	स्ता	का	गु	ड़
वा	आं	ति	ल	पि	फी	ने	दो	चो
दि	व	का	मा	जा	स	स्वे	ट	र
अ	ला	व	सा	बा	का	दा	गी	ज़ा
सू	हा	दा	चि	दा	ढ़ा	पा	ज़	ई
दो	प	गा	भो	म	फ	ल	र	नी
का	ल	ज	जै	के	ट	क	ले	सो
टो	पी	क	मा	ली	ट	र	दी	जा

9. एक कॉलोनी में 100 मकान हैं। एक पेंटर को मकानों के बाहर उनके नम्बर पेंट करने का काम सौंपा गया है। बताओ उसे नम्बर 1 कितनी बार पेंट करना पड़ेगा?

10. दी गई ग्रिड में ठण्ड के मौसम से सम्बन्धित कई चीज़ों के नाम छिपे हुए हैं। तुमने कितने ढूँढे?

जवाब पेज 42 पर

मेरा पन्ना

एक पुराना-सा बेड

अहान जैन
दूसरी, डीएलडीएवी मॉडल स्कूल, दिल्ली

जब भी मैं अपनी नानी के घर जाता हूँ तो वहाँ एक पुराना-सा बेड देखने को मिलता है। मैं और मेरे कज़िन हमेशा उस पर खेलते हैं। उसमें एक दरवाज़ा बना हुआ है। जब भी मैं कोई गलती करता हूँ तो मेरी मम्मा कहती हैं कि उस दरवाज़े में से एक चुड़ैल निकलकर आएगी और तुम्हें पकड़कर अन्दर ले जाएगी। कुछ दिनों पहले जब मैं अपने कज़िन के साथ उस दरवाज़े के पास खेल रहा था तो मेरी नानी उसमें से कुछ निकालने वहाँ आईं और तब मुझे समझ आया कि उसके अन्दर सर्दी के लिए कम्बल और तकिया वगैरह रखे हैं। वहाँ कोई चुड़ैल नहीं है।

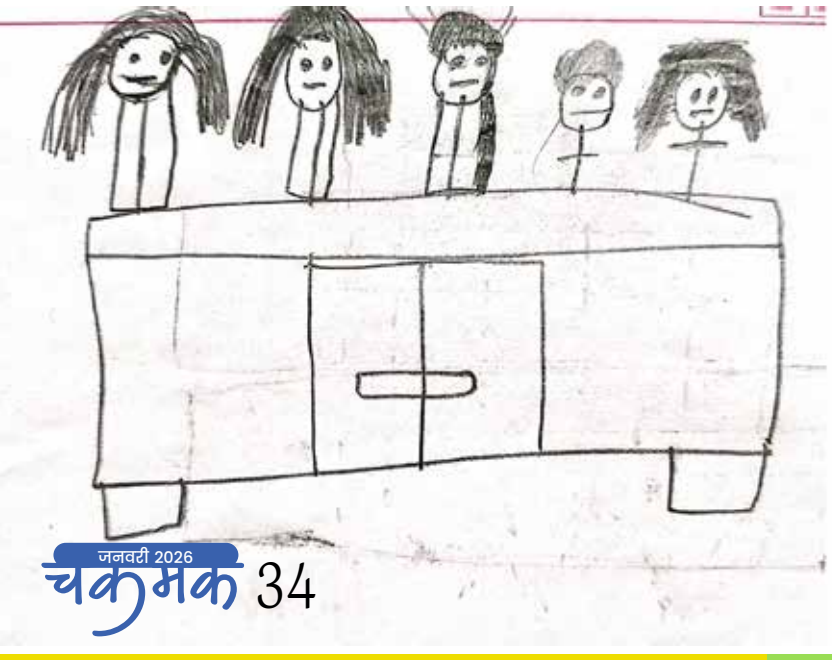

खैता

सोनाक्षी मण्डल
पाँचवीं, राजकीय प्राथमिक विद्यालय, शक्तिफार्म नं. 3
सितारगंज, ऊधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड

मेरे घर की सबसे पुरानी चीज़ है खैता (गद्दा जो चारपाई में बिछाया जाता है)। यह तीस साल पुराना है। जब मेरे दादा-दादी ने यह खैता बनाया था तब मेरे पापा 10 साल के थे। मेरे पापा बताते हैं कि जब ये खैता मेरी दादी ने बनाया था तब वे लोग बहुत गरीब थे। पहनने को कपड़े भी नहीं थे। वे दूसरों के उतरे हुए कपड़े पहनते थे। मेले में पाँच रुपए ले जाते थे तो उसमें से दो रुपए पच्चीस पैसे लौटा लाते थे।

मेरे दादाजी को हमारे मन्दिर से बहुत लगाव था। उनकी आखिरी इच्छा थी कि उनके मरने के बाद मन्दिर के पास वाली ज़मीन में उनकी समाधि बना दी जाए। अब वहीं मन्दिर के पास दादाजी की समाधि बनाई गई है। वहाँ पर मुझसे थोड़ा बड़ा एक तुलसी का पौधा लगा है। मेरी दादी भी अब इस दुनिया में नहीं है। इस खैता में बड़े-बड़े छेद हो गए हैं। फिर भी मेरी माँ ने इस खैता को दादी की आखिरी निशानी मानकर रखा हुआ है।

चित्र: अहान जैन

चित्र: सार्थक, आठवीं, दिल्ली पुलिस पब्लिक स्कूल, वज़ीराबाद, दिल्ली

चित्र: मानवी मुले, छठवीं, सेंट जोसेफ कॉन्वेंट स्कूल, खण्डवा, मध्य प्रदेश

मेरा पन्ना

सच्चे दोस्त और अच्छे कोच

अयान सिंह सोमवंशी
पाथवेज़ स्कूल, नोएडा, उत्तर प्रदेश

मैं तैराकी करता हूँ और मेरे दो अच्छे दोस्त भी मेरे साथ तैरना सीखते हैं। 25 मई 2025 को गौतम बुद्ध नगर ज़िले में 50 मीटर बटरफ्लाई रेस की प्रतियोगिता हुई। यह दिन मेरी ज़िन्दगी का सबसे यादगार दिन बन गया।

हम तीनों रोज़ अभ्यास में 42 से 44 सैकंड में रेस पूरी करते थे। अक्सर मेरा एक दोस्त पहले स्थान पर आता था और मेरे व मेरे दूसरे दोस्त के बीच दूसरे और तीसरे स्थान की अदला-बदली होती रहती थी। प्रतियोगिता के प्रारम्भिक दौर में हमें अलग-अलग समूहों (हीट) में रखा गया।

चित्र: सत्यजीत पारखे, सातवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान, फलटण, सतारा, महाराष्ट्र

पहली हीट में मेरे दोस्त ने 42 सैकंड का समय लिया। दूसरी हीट में मेरे दूसरे दोस्त ने 40 सैकंड का शानदार समय निकाला। यह सुनकर मैं बहुत खुश हुआ। लेकिन मन में डर भी बैठ गया। मुझे लगा कि शायद मैं पीछे रह जाऊँगा। तभी मैंने सोचा, "अगर मेरे दोस्त इतना अच्छा कर सकते हैं, तो मैं भी कर सकता हूँ। मेहनत कभी बेकार नहीं जाती।"

जब मेरी बारी आई और मैं डाइविंग ब्लॉक पर खड़ा था, तो दिल ने कहा, "अब पीछे मुड़कर मत देखो, अपनी पूरी ताकत लगा दो।" जैसे ही स्टार्ट की आवाज़ हुई, मैंने खुद से कहा, "अब जीतने के लिए नहीं, अपना बेस्ट देने के लिए तैरना है।"

मैं पूरी जान लगाकर तैरा। हर स्ट्रोक के साथ मुझे लग रहा था कि पानी मेरे साथ दौड़ रहा है। साँसें तेज़ हो रही थीं। हाथ थक रहे थे। लेकिन मन में एक ही आवाज़ गूँज रही थी, "रुकना मत, तू कर सकता है।" जब मैंने फिनिश लाइन छुई तो दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था। मैंने ऊपर

चित्र: राजेश्वरी यादव, दूसरी, एकलव्य फाउंडेशन, शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र, समनापुर, बीजाडांडी, मंडला, मध्य प्रदेश

टाइमिंग बोर्ड पर नज़र डाली। उस पल मुझे यकीन ही नहीं हुआ – मैंने सिर्फ 38 सैकंड में रेस पूरी कर ली थी। यह न सिर्फ मेरी ज़िंदगी का सबसे अच्छा समय था, बल्कि ज़िले का नया रिकॉर्ड भी बन गया था। पहले स्थान पर अपना नाम देखकर मुझे ऐसा लगा जैसे सारी मेहनत रंग लाई हो। उस खुशी में मैं पल भर के लिए पानी में ही मुस्करा उठा।

इस जीत का असली श्रेय हमारे कोच करमवीर दागर सर को जाता है। वे हमें पिछले एक साल से बिना किसी छुट्टी के लगातार प्रशिक्षण दे रहे हैं। सर हमेशा कहते हैं, “जीत या हार की चिन्ता मत करो, अपना सर्वश्रेष्ठ दो। जब तुम अपना बेस्ट दोगे तो सफलता अपने आप तुम्हारे पास आएगी।” उनकी यही सीख हमें हर दिन मेहनत करने और आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है।

उस पल मैंने सीखा कि सच्चे दोस्त और अच्छे कोच वही हैं जो आपको आगे बढ़ने की ताकत दें। जीतना या हारना ज़रूरी नहीं, ज़रूरी है अपना सर्वश्रेष्ठ देना। हम तीनों दोस्त बहुत खुश हुए। उस रात हमने मिलकर जश्न मनाया और ठान लिया कि आगे और ऊँचाइयों को छुएँगे।

मेरा पन्ना

चित्र: वसुन्धरा, पाँचवीं, प्राथमिक विद्यालय, धर्मपुर, बलरामपुर, उत्तर प्रदेश

खेल का मैदान

अरविन्द
पाँचवीं
प्राथमिक विद्यालय
धर्मपुर, बलरामपुर
उत्तर प्रदेश

हमारे गाँव के बाहर एक बहुत बड़ा विद्यालय है। उसके सामने एक मैदान है। उस मैदान में बहुत-से बच्चे खेलने आते हैं। हम लोग वहाँ पर क्रिकेट, फुटबॉल, कबड्डी खेलते हैं और एक्सरसाइज़ करते हैं। मैं शाम को 5 बजे से 7 बजे तक वहाँ खेलता हूँ। मेरे साथ मेरे बहुत-से दोस्त खेलते हैं। हम लोग जब मैदान में जाते हैं तो ईंट ढूँढकर स्टम्प बनाते हैं। फुटबॉल वाले बड़े भैया लोग आ जाते हैं तो वे हमारा स्टम्प गिराकर खुद खेलने लगते हैं। इसलिए हमको वहाँ से हटना पड़ता है।

यह जगह हमारे गाँव की सबसे मज़ेदार जगह है। क्योंकि यहाँ जो भी आता है वो बहुत खुश नज़र आता है। कभी-कभी खेलते समय हम लोगों का आपस में झगड़ा भी हो जाता है। लेकिन फिर भी हम लोग बुरा नहीं मानते और फिर दोस्त बन जाते हैं।

रंगपंचमी का मेला

रहमान खान
पाँचवीं, नर्मदा वैली इंटरनेशनल स्कूल, नर्मदापुरम, मध्य प्रदेश

मुझे मेरे गाँव की सबसे मज़ेदार जगह गाँव का बाज़ार लगती है। क्योंकि वहाँ पर हर तरफ चहल-पहल होती है। वहाँ पर हर त्योहार धूमधाम से मनाते हैं। वहाँ पर रंगपंचमी का मेला भी लगता है। और जन्माष्टमी के दिन मेरे गाँव में हर साल मटकी फोड़ प्रतियोगिता आयोजित की जाती है। वहाँ पर दीवाली भी धूमधाम से मनाते हैं।

मेरी डायरी

अनुभव कुमार
पाँचवीं, डी. ए. वी. स्कूल, कुरुक्षेत्र, हरयाणा

01-09-2025, सोमवार

आज पूरे दिन बारिश हुई। पापा आज निलोखेड़ी पढ़ाने गए। आज मुख्यमंत्री कार्यक्रम के कारण सड़क बन्द थी। इस कारण हमारी बस घूमकर दूसरे रास्ते से आई और गई भी। आज मैंने श्रीलाल शुक्ल द्वारा लिखित एक कहानी 'एक चोर की कहानी' पढ़ी *चकमक* के एक सौ पचासवें अंक में।

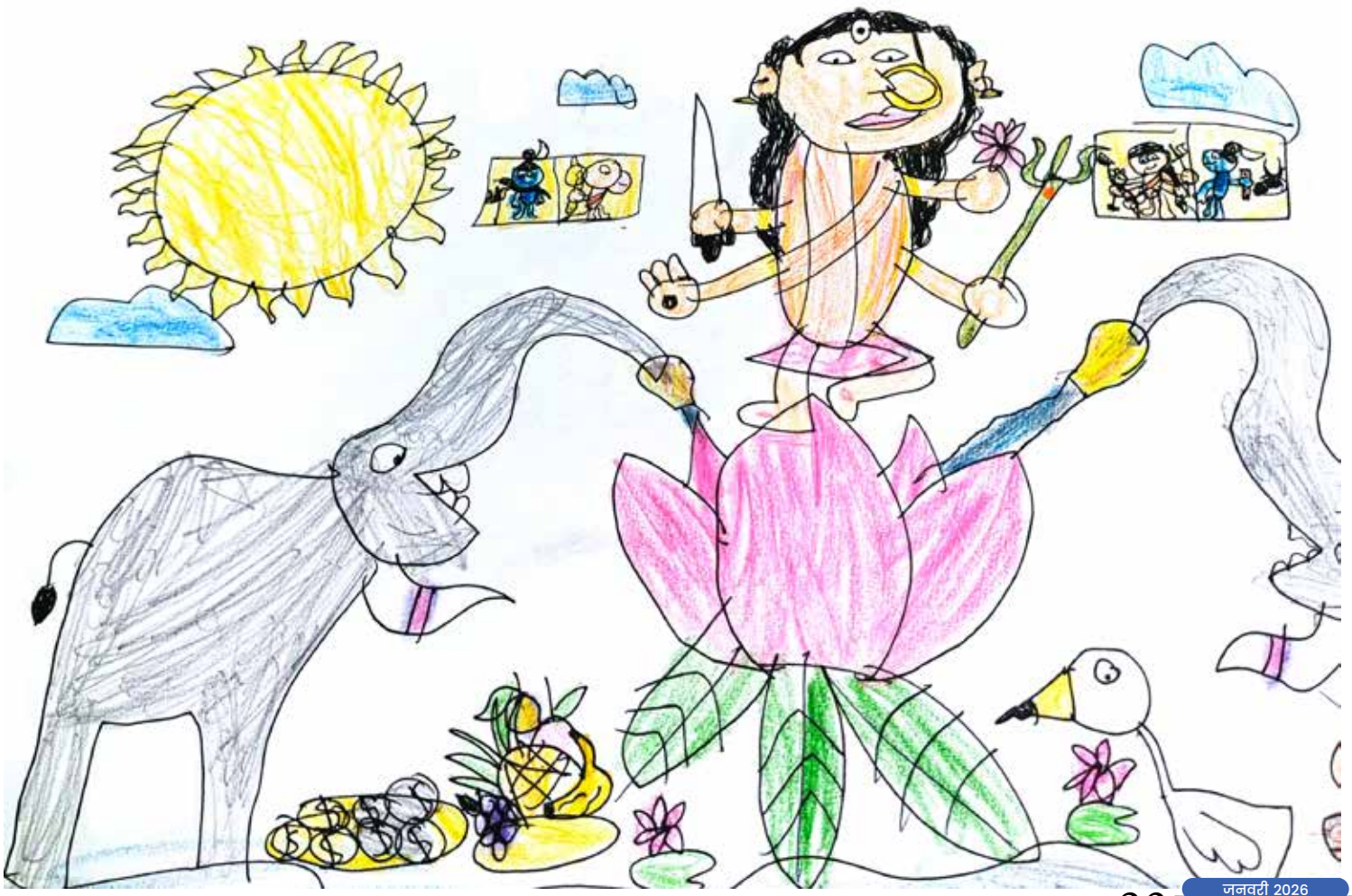

चित्र: चार्वी, यूकेजी 'ए', दिल्ली पब्लिक स्कूल, राजनगर एक्सटेंशन, गाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

भाग - 17

मेहमान जो कभी गए ही नहीं

अन्य देश से आए और हमारे देश में सफलता से बसे हुए आक्रामक पौधों की सीरिज़ की अगली कड़ी...

आर एस रेश्मू राज, ए पी माधवन, टी आर शंकर रमन, दिव्या मुडप्पा, अनीता वर्गीस और अंकिला जे हिरेमथ
रूपान्तरण व अनुवाद: विनता विश्वनाथन

चित्र: रवि जाम्भेकर

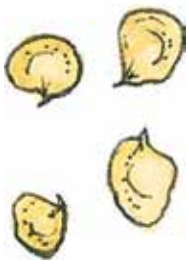

जेरूसलम चेरी

वैज्ञानिक नाम: *सौलैनम स्यूडोकैप्सिकम्* (*Solanum pseudocapsicum*)

मूल: दक्षिण अमेरिका

कैसे पहुँचा: अपने रूप और आकर्षक बेरीनुमा लाल फलों के लिए बतौर सजावटी पौधा लाया गया।

जेरूसलम चेरी एक बारहमासी झाड़ी है। यह डेढ़ मीटर तक बढ़ सकती है। इसका ऊपरी घना हिस्सा बहुत अधिक शाखाओं वाला होता है। यह 1 मीटर तक चौड़ा हो सकता है। शाखाओं पर अक्सर चाँदी जैसे रोएँ होते हैं। लहरदार किनारों वाली इसकी पत्तियाँ 5-8 सेंटीमीटर लम्बी, सरल और अण्डाकार से भालाकार होती हैं। ये पत्तियाँ तने पर एकान्तर क्रम में लगी होती हैं।

जेरूसलम चेरी के फूल पत्तों के कक्ष (axil) में अकेले लगते हैं। इसके फल गोल, एक से डेढ़ सेंटीमीटर चौड़े, चटक लाल और तीखी गन्ध वाले होते हैं। फलों के अन्दर अनेक (50-100) बीज पाए जाते हैं जो आसानी से उग जाते हैं। ये फल खाने वाले जानवरों के लिए हल्के ज़हरीले होते हैं। लेकिन कुछ पक्षी इन्हें खाकर दूर-दूर तक फैलाते हैं।

असर

जेरूसलम चेरी घनी छाँव वाली जगहों में उग सकता है और पाले को भी झेल सकता है। यह विभिन्न तरह के प्राकृतवासों में आसानी से पनपता है। मसलन सड़कों के किनारे, चारागाह और बंजर ज़मीन जैसे पारिस्थितिक रूप से असन्तुलित इलाके। साथ ही नम जंगलों और नदियों के तटवर्तीय वनों जैसे पारिस्थितिक रूप से सन्तुलित इलाकों में भी। उष्णकटिबन्धीय वर्षावनों में यह पौधा जंगलों के निचले हिस्से में फैलकर अन्य किस्मों पर हावी हो जाता है। इससे स्थानीय पौधों की विविधता कम हो जाती है।

*हालाँकि CABI (2023) से प्राप्त उपरोक्त नक्शे में दिखाया नहीं गया है, पर प्रायद्वीपीय भारत में जेरूसलम चेरी को एक आक्रामक एलियन पौधे के तौर पर जाना जाता है।

बन्दोबस्त

फलों के पकने से पहले पौधों को जड़ से उखाड़ देना इस पौधे को फैलने से रोकने और इसकी आबादी को नियंत्रित करने का एक तरीका है। इसके नियंत्रण के कोई ज्ञात रासायनिक या जैविक तरीके नहीं हैं।

माथा पच्ची

जवाब

1.

1	2	5
4		
3		

2. क्योंकि सोमवार का दिन था, रात नहीं।

3. 1 [3] x [3] = [3] 9

5.

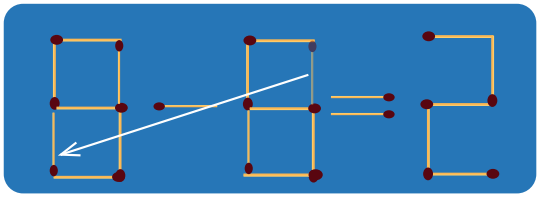

6. हर चैक-पोस्ट पर हर बोरे के लिए 1 नारियल देना है यानी हर चैक-पोस्ट पर वह 3 नारियल देगा। इस हिसाब से दसवीं चैक-पोस्ट तक वह 30 नारियल दे चुका होगा, जो कि एक बोरा नारियल के बराबर है। अब उसके पास केवल 2 बोरे बचेंगे। यानी वो हर चैक-पोस्ट पर 2 नारियल देगा। इस हिसाब से पन्द्रहवीं पोस्ट तक वो 30 नारियल और दे देगा और उसके पास सिर्फ 1 बोरा बचेगा। बाकी की 5 पोस्ट के लिए उसे 5 नारियल देने होंगे और इस तरह उसके पास सिर्फ 25 नारियल बचेंगे।

7. 3 लाल गेंदें = 30, इसलिए 1 लाल गेंद = 30 ÷ 3 = 10
1 लाल गेंद + 4 हरी गेंद = 18, यानी 10 + (4 हरी गेंदें) = 18
4 हरी गेंदें = 18 - 10 = 8
तो एक हरी गेंद = 8 ÷ 4 = 2
2 हरी गेंदें - 2 नीली गेंदें = 2, यानी 4 - 2 नीली गेंदें = 2
तो एक नीली गेंद = 1
अब, आखिर में
1 नीली गेंद + 1 लाल गेंद x 1 हरी गेंद = 1 + 10 x 2 = 21

8.
1. पापा को टाई बाँधना नहीं आता।
2. कुछ पराठे बचे हुए हैं।
3. आग रात में लगी थी।
4. घर का बना रसगुल्ला मुझे बहुत पसन्द है।
5. अमिताभ टिण्डा खाना बिलकुल पसन्द नहीं करता।

9. 21 बार। 1, 10, 11, 12, 13, 14, 15,16, 17, 18, 19, 21, 31, 41, 51, 61, 71, 81, 91 और 100

10.

श	क	र	कं	द	स	नौ	कि	पे
रे	मा	शॉ	ब	ला	स्ता	का	गु	ड़
वा	आं	ति	ल	पि	फी	ने	दो	चो
दि	व	का	मा	जा	स	स्वे	ट	र
अ	ला	व	सा	बा	का	दा	गी	ज़ा
सू	हा	दा	चि	दा	ढ़ा	पा	ज़	ई
दो	प	गा	भो	म	फ	ल	र	नी
का	ल	ज	जै	के	ट	क	ले	सो
टो	पी	क	मा	ली	ट	र	दी	जा

4.

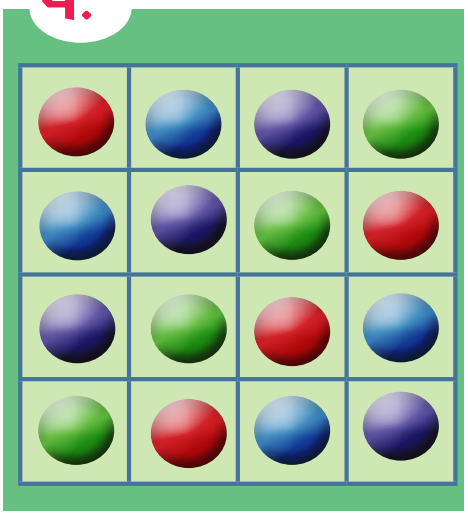

इस अंक की चित्रपहेली का जवाब

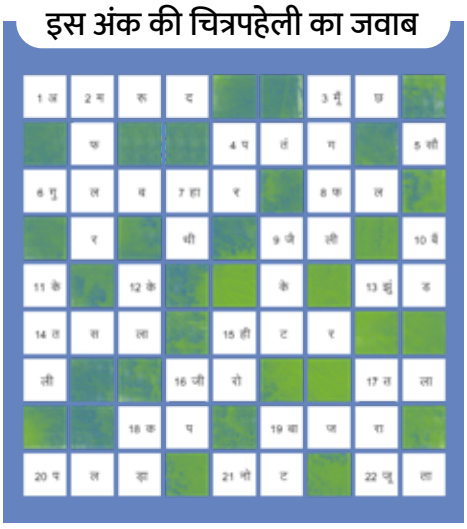

सुडोकू-92 का जवाब

5	3	7	6	9	2	8	4	1
1	8	2	7	4	5	3	6	9
9	4	6	1	8	3	2	7	5
6	7	8	2	5	9	1	3	4
4	1	9	8	3	6	5	2	7
3	2	5	4	7	1	9	8	6
7	5	1	3	2	4	6	9	8
2	6	4	9	1	8	7	5	3
8	9	3	5	6	7	4	1	2

100 साल बाद यहाँ रहने आए हैं हाथी

मुगलों के समय वर्तमान मध्य प्रदेश के इलाकों में हाथी घूमते थे। उसके बाद, खासकर अँग्रेज़ों के दौर में, शिकार बढ़ा व बड़े पैमाने पर जंगल नष्ट किए गए। और बीसवीं सदी की शुरुआत तक यहाँ से हाथी गायब हो गए। लेकिन 2025 की गणना में यहाँ 97 हाथी पाए गए हैं। इसे वन्यजीव संरक्षण की एक उपलब्धि मान सकते हैं। लेकिन इसका एक कारण ये है कि 1980 के दशक में झारखण्ड में जंगल तेज़ी-से घटने लगे। इसलिए हाथियों ने पश्चिम की ओर पलायन करना शुरू किया। पिछले कुछ दशकों में पूरब से आए हाथियों के झुण्ड यहाँ के रहवासी बन गए हैं और इनकी संख्या बढ़ रही है। लेकिन घटते जंगलों के कारण हाथी आबादी वाले इलाकों में आने लगे हैं। इससे फसलों व सम्पत्ति को नुकसान पहुँचता है और कभी-कभी लोग भी घायल हो जाते हैं। यह गम्भीर चिन्ता का विषय है।

मवेशी कम डकार लेंगे

2025 में जलवायु परिवर्तन की गति को रोकने से जुड़ी एक महत्वपूर्ण टेक्नोलॉजी उभरी है। इस टेक्नोलॉजी के बदौलत मवेशी 30 प्रतिशत तक कम डकार लेंगे। यानी वायुमण्डल में ग्रीनहाउस गैस मीथेन कम मात्रा में छोड़ी जाएगी। इस टेक्नोलॉजी के तहत ऐसे पूरक आहार विकसित किए गए हैं जिन्हें जानवरों के पानी या खाने में मिलाने से उनका पाचन बेहतर होता है। और मीथेन गैस कम बनती है। उम्मीद है कि आगे चलकर इनमें और सुधार होने से मवेशियों के ज़रिए छोड़े जाने वाली मीथेन गैस की मात्रा में 80 प्रतिशत तक कमी लाई जा सकेगी।

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म. प्र./भोपाल/261/2021-23

क्यों महुआ तोड़े नहीं जाते पेड़ से

जसिंता केरकेट्टा
चित्र: कनक शशि अनिल

माँ तुम सारी रात
क्यों महुए के गिरने का इन्तज़ार करती हो?
क्यों नहीं पेड़ से ही सारा महुआ तोड़ लेती हो?

माँ कहती हैं वे रात भर गर्भ में रहते हैं
जन्म का जब हो जाता है समय पूरा
खुद-ब-खुद धरती पर आ गिरते हैं
भोर, ओस में भीगते हैं धरती पर
हम घर ले आते हैं उन्हें उठाकर

पेड़ जब गुज़र रहा हो
सारी रात प्रसव पीड़ा से
बताओ कैसे डाल हिला दें ज़ोर से?
बोलो कैसे तोड़ लें हम
जबरन महुआ किसी पेड़ से?

हम सिर्फ इन्तज़ार करते हैं
इसलिए कि उनसे प्यार करते हैं।

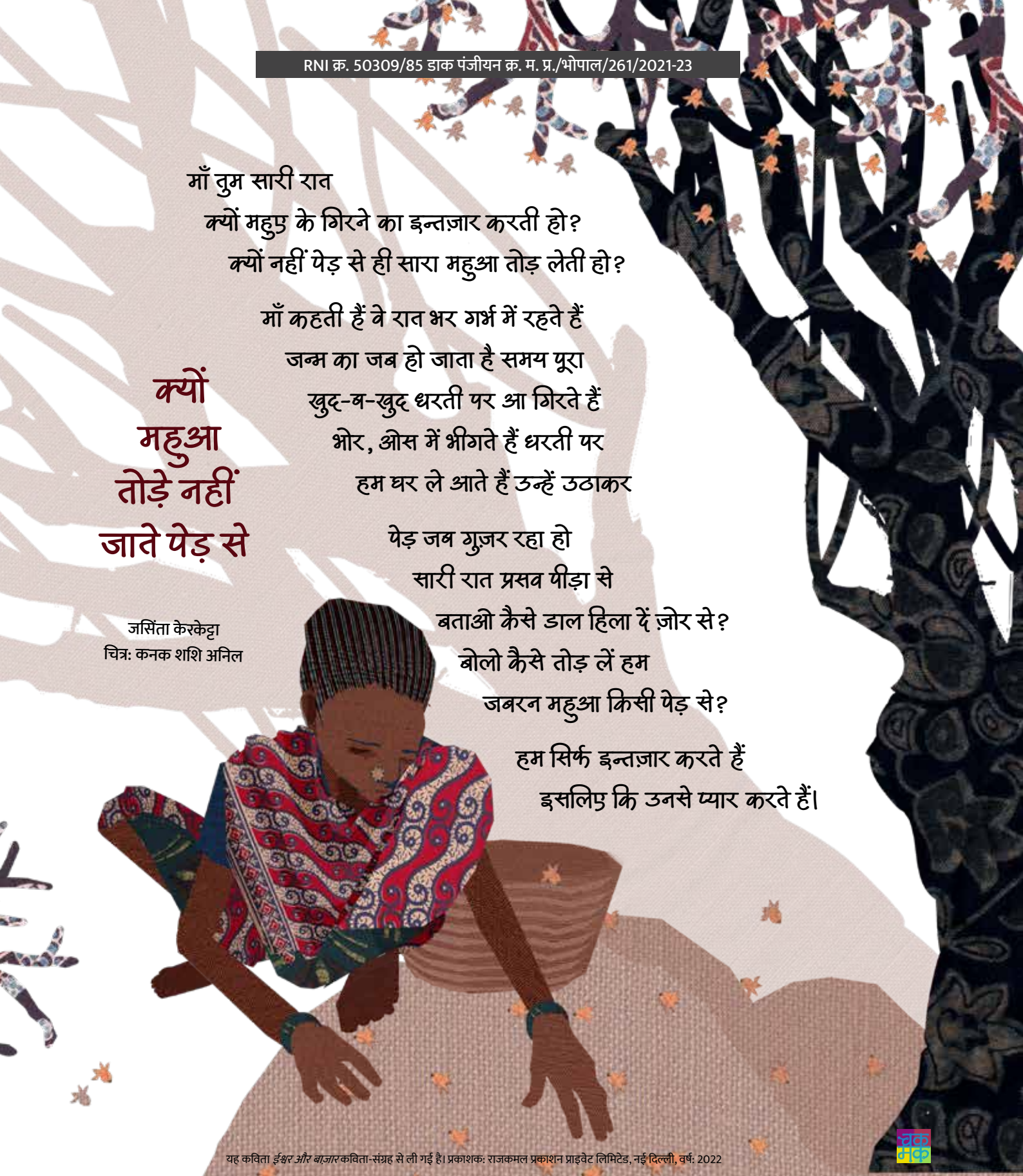

यह कविता *ईश्वर और बाज़ार* कविता-संग्रह से ली गई है। प्रकाशक: राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, वर्ष: 2022

प्रकाशक टुलटुल बिस्वास द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य फाउंडेशन, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल, मध्य प्रदेश 462 026
से प्रकाशित एवं मुद्रक आर के सिक्युप्रिंट प्रा. लि. द्वारा प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोन: 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादक: विनता विश्वनाथन